गंगा-पुस्तकमाला का छियासीवाँ पुष्प

मदर-इंडिया का जवाब

लेखिका
श्रीमती चंद्रावती लखनपाल एम्० ए०
(गुरुकुल-विश्वविद्यालय, काँगड़ी)

प्रकाशक
गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
२९-३०, अमीनाबाद-पार्क
लखनऊ

द्वितीयावृत्ति

सजिल्द [illegible]] सं० १९८९ वि० [सादा [illegible]

प्रकाशक
श्रीदुलारेलाल भार्गव
अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
लखनऊ

मुद्रक
श्रीदुलारेलाल भार्गव
अध्यक्ष गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस
लखनऊ

श्रीमती चंद्रावती लखनपाल एम्० ए०

दो शब्द

यह युग श्वेतांग जातियों के प्रभुत्व का युग है। काली जातियों को चिड़िया-घर की चीज़ समझा जाता है। जनवरी, १६२६ में बर्लिन के एक विशाल चिड़िया-घर में गुजराती तथा तामिल बालकों को वहाँ की एक कंपनी ने अजूबा जानवरों के तौर पर प्रदर्शित किया था। उसी साल जून में पेरिस के एक चिड़िया-घर में १२० भारतीय ग्रामीण इस हत-भाग्य देश के ग्रामों की दुरवस्था प्रदर्शित करने के लिये रक्खे गए थे। भारत तथा एशिया के अन्य देशों के प्रति घृणा के भावों का, योरप तथा अमेरिका में जहाँ-तहाँ प्रचार किया जा रहा है। मिस मेयो की पुस्तक 'मदर-इंडिया' इसी उद्देश्य से लिखी गई है। यह पुस्तक भारत में पढ़ने के लिये नहीं लिखी गई—यह लिखी गई है योरप के लिये, अमेरिका के लिये, अपने को सभ्य कहने तथा कहलानेवाले श्वेतांग देशों के लिये! मिस मेयो ने सभ्य-संसार (?) के सामने ढोल पीट-कर घोषणा की है—'देखो भारत! यहाँ देवतों के नाम पर बकरों के खून की नदियाँ बहाई जाती हैं, स्त्रियों पर अत्या-चार होता है, गोशालाओं में गोवध होता है, पवित्र कहाने-

वाले तीर्थों में गंदगी का ढेर होता है!'—यह घोषणा मिस मेयो ने योरप तथा अमेरिका के एक-एक कोने में कर दी है। मिस मेयो के दिमाग़ में श्वेतांगों के स्वाभाविक प्रभुत्व का सिद्धांत कूट-कूटकर भरा हुआ है। उसने झूठ-सच की चिंता न करते हुए भारतवर्ष को चिड़िया-घर का-सा रूप दिया है। प्रस्तुत पुस्तक में मिस मेयो के अनर्गल झूठों को जगह-जगह दर्शाते हुए अंत में परिशिष्ट के तौर पर योरप तथा अमेरिका के अधःपतन का भी नग्न रूप दे दिया गया है। परंतु क्या यही 'मदर-इंडिया' का जवाब है? इसमें संदेह नहीं कि योरप तथा अमेरिका में शराब, व्यभिचार, चोरी, डाके तथा अत्याचार दिनों-दिन बढ़ रहे हैं, परंतु मैं स्पष्ट शब्दों में उद्घोषित कर देना चाहती हूँ कि यह सब कुछ कह देना 'मदर-इंडिया' का असली जवाब नहीं है। मिस मेयो की बहुत-सी बातें झूठ हैं, झूठ ही नहीं, गंदी तथा नीचता-पूर्ण हैं, परंतु क्या इस पुस्तक के पन्नों को पलट जाने पर कोई इस बात से इनकार कर सकता है कि उसकी कई बातें सच्ची भी हैं, और यह लिखते हुए छाती फटती है कि बिलकुल सच्ची हैं! मैं चाहती हूँ कि भारतवर्ष के एक-एक व्यक्ति के हाथ में यह पुस्तक पहुँचे, और सबको मालूम हो जाय कि हमें बदनाम करने के लिये जहाँ मिस मेयो ने झूठ

बोलने में कसर नहीं छोड़ी, वहाँ कहीं-कहीं सच बोलने में भी कसर नहीं छोड़ी ! पाठक, इन शब्दों की गूँज में पुस्तक के पन्ने पलटिए और अपने समाज की गंदगी को भस्म कर देने के लिये आँखों से चिनगारियाँ निकालते चलिए। यही 'मदर-इंडिया' का असली जवाब है !

चंद्रावती

विषय-सूची

	पृष्ठ
प्रथम भाग	१
द्वितीय भाग	३८
तृतीय भाग	५६
चतुर्थ भाग	८४
परिशिष्ट—	
१. अमेरिका में पाप की परा काष्ठा ! ...	१२६
२. सभ्य संसार में 'अछूत' ! ...	१३८
३. 'सभ्यता' या 'दुराचार' ? ...	१४५
४. "श्वेतांगों का भार" ...	१५३
उपसंहार	१६५

मदर-इंडिया का जवाब

प्रथम भाग

भारतवर्ष की स्वतंत्रता का जिन अमानुषिक उपायों से अपहरण किया गया है, वे हमारी स्मृतियों में अभी ताज़े ही हैं कि हम अपनी आँखों के सामने उन चालों को काम में लाया जाता देख रहे हैं, जिनसे परतंत्रता के जुए को भारतवासियों के कंधों पर कसकर बाँध दिया जाय। संसार की महान् शक्तियाँ (World Forces) जिस दिशा की तरफ़ दौड़ रही हैं, उसे देखते हुए आशा होती है कि ये चालें देर तक न चल सकेंगी—परंतु चालबाज़ स्वार्थी अपनी चालों से बाज़ नहीं आते। वे कहते हैं, परमात्मा ने उन्हें संसार को सभ्य बनाने का भार सौंपा है, इसलिये उनका फ़र्ज़ है कि असभ्य भारत में भी सभ्यता का प्रकाश फैलाएँ, और जब तक वह सभ्यता के सिद्धांतों को स्वीकार न कर ले, तब तक उसे अपनी संरक्षा में रक्खें ; क्योंकि उनमें से बहुत-से परमात्मा को नहीं मानते, इसलिये वे कहते हैं कि उन्होंने संसार को सभ्य बनाने का

'ठेका' लिया है। इसकी परवा नहीं कि यह 'ठेका' उन्हें किसी ने दिया हो या न दिया हो। संसार की प्रगति को देखकर—जब कि चारों तरफ़ जागृति के चिह्न दिखाई दे रहे हैं—किसी देश का भी सोया रहना असंभव है, इसलिये प्रत्येक परतंत्र देश परतंत्रता की बेड़ियों को तोड़ गिराने के लिये हाथ-पैर मार रहा है। यह दृश्य झूठे 'ठेकेदारों' से नहीं सहा जाता। वे अपने 'ठेके' के समय को बढ़ाने के लिये भी उतना ही हाथ-पैर मारते दिखाई देते हैं! उन्होंने अपने स्वार्थों के लिये सड़कें, रेलें और स्कूल खोले हैं, परंतु हमें संबोधन कर कहते हैं—"देखो, तुम्हारे देश को हमने कितना सभ्य बनाया!" मानो वे हमें समझाना चाहते हैं कि सड़कें बनाना, रेलें चलाना, स्कूल और हस्पताल खोलना दुनिया-भर में अँगरेज़ ही जानते हैं, और कोई नहीं जानता। ये चीज़ें तो वर्तमान सभ्यता के अमर फल हैं! अँगरेज़ भारत में आते या न आते, यह तो युग ही जागृति का है। अँगरेज़ों के बग़ैर भी रेलें और सड़कें भारत में बनतीं और स्कूल तथा हस्पताल खुलते। हाँ, इस समय यह सब कुछ अँगरेज़ों के सुभीते को सामने रखकर और अँगरेज़ी राज्य की भारत में सुदृढ़ नींव डालने के लिये किया गया है, और दूसरी हालत में यह सब कुछ भारतीयों के सुभीते को सामने रख-कर और भारतीय राज्य को सुदृढ़ बनाने के लिये होता। परा-

ज़रा-सी चीज़ दिखाकर—चाकू, पेंसिल और दियासलाई दिखाकर—अँगरेज़ कहते हैं—"हम यह लाए", परंतु वे भूल जाते हैं कि यदि वे न होते, तो "यह सब कुछ हमारे घर होता !" इस समय भारतवासी 'ठेकेदारों' की इस युक्ति के खोखलेपन को समझ रहे हैं, इसलिये मालूम पड़ता है, इन्हीं 'ठेकेदारों में से कुछ ने अमेरिका की एक औरत को—जिसका नाम कैथरीन मेयो है—इस काम पर लगाया है कि वह सभ्य जगत् के सामने अँगरेज़ों के भारतवर्ष में रहने के हक़ की सफ़ाई पेश करे। बहुतों का विश्वास है कि मिस मेयो ऐंग्लो-इंडियन लोगों की एजेंट हैं। हो सकता है, यह ठीक हो या न हो। कहते हैं, इन लोगों ने मिस मेयो की लिखी 'मदर-इंडिया' पुस्तक की हज़ारों प्रतियाँ ख़रीदकर पार्लियामेंट के मेंबरों को मुफ़्त बाँटी हैं। सुना है, अमेरिका में इस पुस्तक की ५० हज़ार कॉपियाँ मुफ़्त बँटी हैं। यदि ये बातें ठीक हैं, तो इस बात में संदेह नहीं रह जाता कि इस पुस्तक के पीछे एक बुढ़िया ही नहीं है ! यह पुस्तक ठीक ऐसे समय प्रकाशित की गई है, जब कि 'स्टैच्युटरी कमीशन' आनेवाला है, जब कि एक तरह से भारत के भाग्य पर विचार होनेवाला है ! इस काम के लिये मिस मेयो को चुना गया हो, इसमें ज़्यादा

आश्चर्य की बात भी नहीं। दो साल पहले 'फ़िलिपाइंस' की स्वतंत्रता-विषयक प्रश्न पर जब विचार हो रहा था, तो इसी मेयो ने उन लोगों को दुनिया-भर में बदनाम करने के लिये "The Isles of Fear"-नामक पुस्तक लिखी थी। मेयो ने अपनी रोज़ी का पेशा ही यह बनाया, मालूम पड़ता है। 'मदर-इंडिया' का उद्देश्य ही भारत को बदनाम करना है। उसके एक-एक पृष्ठ, एक-एक पंक्ति और एक-एक शब्द में भारतीयों को चिढ़ाया गया है। जगह-जगह दोहराया गया है कि भारतवर्ष स्वराज्य के अयोग्य है। एक-एक शब्द इसी उद्देश्य को सम्मुख रखकर लिखा गया है। स्वार्थहीन व्यक्ति ऐसी पुस्तक लिख ही नहीं सकता, असंभव है! मिस मेयो ने बेधड़क होकर झूठ बोला है। जिन-जिनसे उसकी बातचीत हुई है, उनमें से बहुतों के तो उसने नाम नहीं दिए, जिनके दिए हैं उनमें से बहुतों ने कह दिया है कि हमने ये बातें इसमे कहीं ही नहीं, झूठ लिखती है! महात्मा गांधी तथा रवींद्रनाथ टागौर तक के नाम से झूठ बोल गई है। वह जानती होगी कि ये लोग इनकार करेंगे, परंतु शायद वह यह भी जानती होगी कि उसकी किताब तो लाखों में मुफ़्त बँटेगी; इन बेचारों की आवाज़ कहाँ तक पहुँचेगी!

महात्मा गांधी ने 'मदर-इंडिया' की आलोचना करते हुए ठीक कहा है कि इसमें लिखी बहुत-सी बातें तो साधारण भारतीयों को मालूम भी नहीं। मालूम कैसे हों, जब उसने कोई-सी बात कहीं से सुनकर कह दिया, 'देखो हिंदुस्तान !' एक ईसाई महिला ने मिस मेयो के भारत में आते ही उसे सलाह दी थी कि तुम यदि कुछ बुराई कहीं देखो, तो उसे सामान्य नियम न समझ लेना। यही सलाह है, जिसे मिस मेयो ने मानने से इनकार कर दिया, दीखता है। लेडी अंडरीहल ने बहुत ठीक लिखा है—"क्या मिस मेयो, अब जब कि वह भारत में चक्कर लगा चुकी हैं, भारत के विषय में पहले की अपेक्षा ज्यादा जानती हैं ?" ज्यादा कैसे जानतीं। जिस पुस्तक को उसने लिखा है, उसका खाका तो पहले से ही उसके दिमाग़ में था। उस खाके को भरनेवाली घटनाएँ ४ महीने के चक्कर में इकट्ठी करके वह ले गई, और किताब लिख डाली। जगह-जगह के अँगरेज़ों से मिली, उनसे पूछा, कोई कहानी तो सुनाओ, हिंदुस्तानी कैसे गंदे हैं। बस, वह कहानी बने-बनाए खाके में अपनी जगह पर जड़ दी और 'मदर-इंडिया' तैयार हो गई !

कइयों का कथन है कि 'मदर-इंडिया' पुस्तक ने भारतवर्ष के विषय में जितनी हलचल पैदा कर दी है, इतनी

हलचल इस शताब्दी में किसी और पुस्तक ने उत्पन्न नहीं की । भारतवर्ष के संबंध में सबसे ज्यादा बँटने तथा बिकनेवाली यही पुस्तक है । इस पुस्तक में क्या लिखा है, यह जानने की प्रत्येक भारतवासी को उत्सुकता है । इस पर अब तक जो कुछ लिखा गया है, वह प्रायः अँगरेजी अखबारों की समालोचनाओं के आधार पर ही लिखा गया है, परंतु जितना कुछ लोगों के सामने आया है, वह उससे बहुत कम है, जितना इस गंदी पुस्तक में मौजूद है । मैंने इस पुस्तक को आदि से अंत तक पढ़ा है, मैं चाहती हूँ, इसकी झूठी-सच्ची बातें हिंदी-पाठकों के सामने आवें ताकि उन्हें मालूम हो कि यदि वे बातें झूठी हैं, तो विदेशी लोग उनकी स्वतंत्रता के फूटते हुए पंखों को किस प्रकार काटने की चिंता में हैं और यदि वे बातें सच्ची हैं, तो उन्हें दूर करने में प्रयत्न-शील हों, ताकि वह लांछन उन पर से उठ जाय !

इस पुस्तक के प्रथम पृष्ठ का शीर्षक है—'The Bus to Mandalay'—मांडले को जानेवाली 'बस'—परंतु सारी पुस्तक में मांडले का कहीं ज़िक्र तक नहीं है । पुस्तक तीस अध्यायों में बाँटी गई है, परंतु प्रायः शीर्षक कुछ दिया है और अंदर कुछ लिखा है । शीर्षक का उस

अध्याय से ज्यादा संबंध नहीं, और अध्यायों का परस्पर ज्यादा संबंध नहीं ! भारत के कोने-कोने से गंद इकट्ठा करने में मिस मेयो ने अपने को इतना भुला दिया है कि उसे दूसरी किसी बात का ध्यान नहीं रहा मालूम पड़ता। शुरू से आख़ीर तक पुस्तक को पढ़ जाने से मालूम पड़ता है, किसी ने भारतीयों के प्रति घृणित अट्टहास उत्पन्न करने के लिये 'चुटकलों' का संग्रह कर दिया है। पहले ही पृष्ठ पर कलकत्ते का वर्णन करती हुई मिस मेयो लिखती है—

"In the courts and alleys and bazars many little bookstalls, where narrow-chested, near sighted, anæmic young Indian students, in native dress, brood over piles of fly-blown Russian pamphlets."

"कलकत्ते की गली-गली में छोटे-छोटे किताब-घर हैं। उनमें भारतीय विद्यार्थी, जिनकी छाती सिकुड़ी हुई है, आँखें कमज़ोर हैं, बदन में ताक़त नहीं है, धोती पहने हुए, रूस के गंदे-गंदे ट्रैक्टों को आँखें फाड़-फाड़कर पढ़ रहे हैं।"

इस सूत्र से पुस्तक का श्रीगणेश होता है। यह सूत्र मिस मेयो पर पर्याप्त टीका है। इस पुस्तक के लिखने का यही

उद्देश्य है ! ये गंदे, मरियल-से हिंदुस्तानी, बोलशेविकों से सुन-सुनकर 'स्वराज्य-स्वराज्य' चिल्ला रहे हैं ; असल में इनकी क्या हालत है ?—मिस मेयो कहती हैं, 'सुनिए, मेरे शब्दों में !'

मालूम पड़ता है कि यह कुमारी गवर्नमेंट हाउस कलकत्ता में ठहराई गई। वहाँ से वह सीधी कालीघाट गई। हलधर-नामक किसी व्यक्ति ने उसे मंदिर दिखलाया। वहाँ बकरे-पर-बकरा काटा जा रहा था। इतने में क्या हुआ—

"Meanwhile, and instantly, a woman who waited behind the killers of the goat has rushed forward and fallen on all fours to lap up the blood with her tongue 'in the hope of having a child.' 'In this manner we kill here from 150 to 200 kids each day', says Mr. Haldar with some pride. 'The worshippers supply the kids'."

"इतने में एकदम एक स्त्री, जो बकरा मारनेवालों के पीछे खड़ी थी, दौड़ी-दौड़ी आई और 'बच्चा लेने की उम्मीद से' घुटने और कुहनी जमीन पर टेककर खून को जीभ से लप-लप चाटने लगी। हलधर ने कुछ अभिमान से कहा—

'इस प्रकार हम रोज़ १५० से २०० मेमने मारते हैं, और श्रद्धालु लोग उन्हें जुटाते हैं' !"

मिस मेयो सीधा गवर्नमेंट हाउस से उतरकर काली के मंदिर की प्रदक्षिणा करने गईं। दो ही चीज़ें कलकत्ते में देखने लायक़ थीं। एक बोलशेविक लोगों के जगह-जगह पर बिखरे हुए ट्रैक्ट जो, शायद बंगाल के गवर्नर की उदारता से गली-गली उड़ रहे थे और दूसरी चीज़ काली का मंदिर, जिसे प्रत्येक समझदार हिंदू हिंदू-धर्म पर कलंक समझ रहा है और जिसकी बुराइयों को दूर करने में हिंदू-समाज लगा हुआ है। श्रीमती मारगरेट कज़न ने इस स्थल की आलोचना करते हुए ठीक लिखा है कि काली का बीभत्स वर्णन करते हुए मिस मेयो ने यह लिखना छोड़ दिया है कि ब्रिटिश भारत में तो यह कुर्बानी, परंतु ट्रावनकोर की महारानी ने, जो कि एक देसी रियासत में राज्य करती है, राज्य की बागडोर हाथ में लेते ही पहला काम यह किया कि सब तरह की कुर्बानियाँ बंद कर दीं। मिस मेयो को पता होना चाहिए था कि हमारी बहुत-सी कुरीतियाँ हमारी 'माई-बाप' बनी हुई सरकार की मेहरबानी से भी हैं। अगले दिन एक थियोसॉफ़िस्ट अँगरेज़ ने मिस मेयो से कहा भी, 'तुम काली का मंदिर देखने नाहक़ गईं, वह भारतवर्ष नहीं है।' परंतु उन

महाशय को क्या मालूम था कि मिस मेयो तो 'मदर-इंडिया' के लिये एक 'चुटकला' ढूँढने गई थीं !

'कलकत्ते' और 'काली' का रौद्र तथा बीभत्स वर्णन कर यह मिस अगले अध्याय में बतलाती है कि वह भारतवर्ष क्यों आई थी ? पूछनेवाला हो, तो इससे पूछे कि यह बात तो पुस्तक के शुरू में लिखनी थी, तुझे इतना उतावलापन क्या था कि क़लम उठाते ही बोलशेविकों के ट्रेक्टों और काली के दृश्यों की दुहाई देनी शुरू कर दी ? ख़ैर, आने का उद्देश्य सुनिए—

"What does the average American actually know about India? That Mr. Gandhi lives there; also tigers.. It was dis-satisfaction with this state that sent me to India, to see what a volunteer unsubsidized, uncommitted, and unattached could observe of common things in daily human life...Therefore in early October 1925 I went to London, called at India Office, and, a complete stranger, stated my plan."

"अमेरिकन लोग भारतीयों के विषय में क्या जानते हैं ? यही कि वहाँ गांधी रहता है; और शेर ! इस अवस्था से मैं

संतुष्ट न थी, इसलिये मैं भारत गई। मैं देखना चाहती थी कि एक वालंटियर, जिसने किसी का रुपया न खाया हो और पहले से अपने विचार न बना लिए हों, भारतवर्ष के दैनिक मानव-जीवन का क्या चित्र खींच सकता है ? इसलिये मैं १६२५ के ऑक्टोबर के शुरू में लंडन के इंडिया ऑफ़िस में गई और बिलकुल अपरिचित व्यक्ति की भाँति अपनी स्कीम कह डाली।"

अच्छा, तो मिस साहब 'वालंटियर' बनकर आई थीं ! ऐसी वालंटियरी के लिये बधाई ! आपका विचार है कि आपने 'रुपया नहीं खाया' और भारतवर्ष के संबंध में आपके विचार 'पहले से बने हुए नहीं थे !' क्योंकि आपने 'रुपया नहीं खाया' इसीलिये आप सीधा इंडिया ऑफ़िस गईं ! ठीक है, रुपया खातीं, तो भला इंडिया ऑफ़िस क्यों जातीं ? इस जगह आपको यह कहने की भी आवश्यकता महसूस हुई कि आप उन लोगों से 'बिलकुल अपरिचित' थीं ! मिस का एक-एक शब्द बतला रहा है कि वह 'वालंटियर' थी, उसने 'रुपया नहीं खाया', अपने विचार 'पहले से नहीं बनाए' और वह इंडिया ऑफ़िसवालों से 'बिलकुल अपरिचित' थी !

सुनिए, पाठक, इस 'वालंटियर' ने क्या-क्या गजब ढाया !

दूसरे अध्याय के शुरू में मिस लिखती है—

"The Indian girl, in common practice, looks for motherhood nine months after reaching puberty—or anywhere between the ages of 14 or 8."

"अक्सर यहाँ की लड़कियाँ जवानी के ९ महीने बाद मा बन जाना चाहती हैं। यह समय ८ से १४ वर्ष की उम्र के अंदर-अंदर होता है।"

मिस मेयो की यह बात सफ़ेद आदमी का काला झूठ है। इसका खंडन करते हुए डॉ० मिस बालफ़र एम्० बी० ने 'टाइम्स ऑफ़ इंडिया' में अपने अनुभव के आधार पर लिखा है—"३०४ हिंदू माताओं का बंबई के हस्पताल में पहला बच्चा उत्पन्न हुआ। उनकी आनुपातिक आयु १८.७ वर्ष थी। इनमें से ८५.६ प्रतिशतक की आयु १७ वर्ष या इससे ऊपर थी और १४.४ प्रतिशतक की १७ से नीचे थी। सबसे छोटी उम्र १४ वर्ष थी और उनमें उस उम्र की केवल ३ स्त्रियाँ थीं। मैंने मदरास मेटर्निटी हस्पताल के १९२२-२४ के अंक भी देखे हैं। वहाँ २३१२ स्त्रियों की प्रथम संतान हुई और आनुपातिक आयु १९.४ वर्ष थी। ८६.२ प्रतिशतक १७ वर्ष या इससे ऊपर की थीं और १३.८ प्रतिशतक १७

से नीचे की थीं, सबसे छोटी उम्र १३ वर्ष थी। ७ स्त्रियों की उम्र १३, और २२ की १४ वर्ष थी। मेरे पास अन्य प्रांतों की, जिनमें उत्तर भारत भी शामिल है, रिपोर्टें हैं। इनमें ३९६४ में से केवल १० की आयु १५ वर्ष से कम थी और सबसे छोटी उम्र १३ वर्ष थी।"

इन अंकों की मौजूदगी में मिस का उक्त उद्धरण जान-बूझकर उगला हुआ विष नहीं तो और क्या है? परंतु ये अंक उसके 'चुटकला-संग्रह' का काम थोड़े ही देते? इसके आगे मिस मेयो लिखती हैं—

"Because of her place in the social system, child-bearing and matters of procreation are the woman's one interest in life, her one subject of conversation, be her caste high or low. Therefore the child growing up in the home learns, from earliest grasp of word or act, to dwell upon sex relations"

"हिंदुओं की सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियों का काम बच्चे उत्पन्न करना ही है, इसलिये स्त्रियों की बातचीत इसी विषय पर हुआ करती है, चाहे वे उच्च जाति की हों, चाहे नीच जाति की; और इसीलिये ऐसे घर में पलता हुआ

बच्चा भी यहीं कुछ सुन और देखकर लिंग-संबंधी बातों पर सोच-विचार किया करता है।"

भारतवर्ष में स्त्रियाँ अपने जीवन का उद्देश्य मातृत्व का उच्च आदर्श समझती हैं और योरप में बच्चों को माता-पिता अपने उच्छृंखल जीवन में विघ्न समझते हैं और इसीलिये कृत्रिम साधनों का प्रयोग करते हैं। इन दोनों में से कौन-सा उच्चतर आदर्श है, इस पर बहस करने का यहाँ मौक़ा नहीं, परंतु बच्चों में गंदे विचारों की चर्चा का जो कारण मिस मेयो ने बतलाया है, वह भारतवर्ष की ही विशेषता नहीं है। यह गिरावट योरप में भारतवर्ष से ज्यादा है। डॉ० एलबट मॉल अपनी पुस्तक 'The Sexual Life of the Child' के १६१ पृष्ठ पर अपने देशों की अवस्था पर लिखते हैं—

"While the child is to all appearance immersed in a book, while a girl is playing with her doll, the parents or some other adults carry on a conversation in the child's presence under the influence of an utterly false belief that the latter's occupation engrosses his or her entire attention...but the danger is hardly less when the children have an opportunity of

observing their own parents engaged in sexual acts, or even mere preparation for such acts."

"जब बचा जाहिरा तौर पर पुस्तक में मग्न होता है या लड़की अपनी गुड़िया से खेल रही होती है, माता-पिता या दूसरे नवयुवक, भूल से यह समझकर कि उनका ध्यान पढ़ने या खेलने में है, उनके सामने गंदी-गंदी बातें शुरू कर देते हैं...परंतु कभी-कभी तो माता-पिता अपने बच्चों के देखते-देखते काम में प्रवृत्त होते हैं, या उसकी तैयारी शुरू कर देते हैं...इससे बच्चों के पतन की संभावना और भी बढ़ जाती है।"

यह नहीं हो सकता कि मिस मेयो को अपनी जाति के लोगों की इन बातों का पता न हो। जिसे अपनी आँख का शहतीर कष्ट नहीं देता, वह दूसरे की आँख के तिनके को निकालने चली है! मेरे कथन का यह अभिप्राय बिलकुल नहीं कि मैं अपने देश के ऐसे माता-पिताओं का बचाव चाहती हूँ। वे मूर्ख हैं, अपनी संतान की अपने हाथों हत्या कर रहे हैं, उन्हें माता-पिता बनने का ही अधिकार नहीं—परंतु, मेयो! भारत को यह पाठ पढ़ाने के लिये तुम्हारी ज़रूरत नहीं! तुम अपने देश की सुध लो!

इसी अध्याय में लिखा है—"Shiva, one of the

greatest Hindu deities, is represented, on high-road shrines, in the temples, on the little altar of the home, or in personal amulets, by the image of the male generative, organ, in which shape he receives the daily sacrifices of the devout. The followers of Vishnu...wear painted upon their foreheads the sign of the function of generation."

"शिव जो कि हिंदुओं के बड़े-बड़े देवतों में से एक है, मुख्य सड़कों पर बने देवालयों में, मंदिरों में, घर के छोटे-से स्थान में, तावीजों में, पुरुष-जननेंद्रिय की शक्ल में प्रतिदिन पूजा जाता है⋯विष्णु के अनुयायी अपने माथों पर प्रजनन क्रिया के चिह्न की छाप लगाते हैं।"

मिस मेयो का कहना है कि १२ सितंबर, १६२३ को जेनवा की कान्फरेंस में अश्लील साहित्य को बंद करने के लिये सब जातियों ने प्रस्ताव स्वीकृत किया, किंतु भारत की 'कोड' में (१६२५ का एक्ट नं० ८, सेक्शन २६२) उक्त अश्लीलताओं को धर्म का हिस्सा समझकर उनकी रक्षा कर ली गई !

भारत की गिरावट का चित्र खींचती हुई यह मिस लिखती है---

"In many parts of the country, north and south, the little boy, his mind so prepared, is likely, if physically attractive, to be drafted for the satisfaction of grown men, or to be regularly attached to temple, in the capacity of a prostitute. Neither parent as a rule sees any harm in this, but is rather flattered that the son has been found pleasing."

"भारतवर्ष में, उत्तर-दक्षिण, अनेक स्थलों पर, छोटे-छोटे बालक यदि देखने में खूबसूरत हों, तो काम-वासना की पूर्ति में काम आते हैं, या उन्हें वेश्यावृत्ति के लिये मंदिर में रख लिया जाता है। माता-पिता को भी इसमें कोई आपत्ति नहीं, उन्हें इस बात से खुशी होती है कि उनका लड़का इतना पसंद किया गया है।"

मिस मेयो ने अपनी निर्लज्जता और झूठ की यहाँ परा काष्ठा कर दी है। मदरास की तरफ कई मंदिरों में देव-दासियाँ रखने का रिवाज है, जिसके विरुद्ध भी हाल ही में वहाँ की लेजिस्लेटिव कौंसिल में प्रस्ताव पास हो गया है। मंदिरों में लड़के रखने की प्रथा कहीं नहीं है। यह दुराचार भारतवर्ष में मुसलमानों की कृपा से आया है। मिस मेयो का देश भी

इससे खाली नहीं है। हेविलाक इलिस 'Sexual Inversion'-नामक पुस्तक के २६१ पृष्ठ पर लिखते हैं—

"'It has been stated by many observers—in America, in France, in Germany, and in England—that homosexuality is increasing among women.' 'I believe', writes a well-informed American correspondent, 'that sexual inversion is increasing among Americans—both men and women'......"

"अनुसंधान करनेवालों ने पता लगाया है कि अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी और इँगलैंड में बदमाशी, खास कर स्त्रियों में, बढ़ रही है। एक जानकार अमेरिकन का कथन है कि अमेरिका की स्त्रियों तथा पुरुषों में बदमाशी बढ़ रही है।"

इलिस महाशय इसी पुस्तक के ३५१ पृष्ठ पर अमेरिका के एक और जानकार की साक्षी उद्धृत करते हैं—

"The great prevalence of sexual inversion in American cities is shown by the wide knowledge of its existence. Ninety-nine normal men out of a hundred have been accosted on the streets by inverts, or have among their

acquaintances men whom they know to be sexually inverted. Everyone has seen inverts and knows what they are...... The world of sexual inverts is, indeed, a large one in any American city, and it is a community distinctly organized—words, customs, traditions of its own; and every city has numerous meeting places; certain churches where inverts congregate."

"अमेरिका में बदमाशों की अधिकता का परिचय इससे मिलता है कि उनके होने का ज्ञान प्रायः सबको है। राह जाते १०० भले-मानसों में से ९९ आदमियों को इन बदमाशों ने पुकारा है, अथवा १०० में से ९९ आदमियों के ऐसे लोग परिचित हैं, जिन्हें वे जानते हैं कि ये बदमाश हैं। हरएक आदमी ने बदमाशों को देखा है और वह जानता है कि बदमाश क्या बला है...इन बदमाशों की दुनिया अमेरिका में बहुत बढ़ी हुई है, इनका एक सुनियंत्रित समुदाय है। इनके अपने संकेत, प्रथा तथा कथानक हैं; प्रत्येक शहर में इनके अनेक मिलने के स्थान हैं; कई गिर्जे ऐसे हैं, जहाँ ये लोग इकट्ठे होते हैं।"

यदि भारत में देव-दासियों की प्रथा है, तो योरप में भी इससे कम घृणित प्रथा नहीं रही है। डॉ० सेंजर महोदय की 'History of prostitution' में योरप के देवालयों ने व्यभिचार को जो प्रोत्साहन दिया और संभवतः अब भी दे रहे हैं, उसके विषय में लिखा है—

"Pope Clemant II issued a bill that prostitutes would be tolerated if they pay a certain amount of their earnings to the church."

"Pope Sixtus IV was more practical; from one single brithel, which he himself had built, he received an income of 20,000 ducats."

पोप लोग वेश्यालय बनवाते थे, और उनसे आमदनी करते थे!

जिस मिस के अपने देश की यह अवस्था है; वह भारत पर लांछन लगाने का साहस करती है!

इसके आगे मिस मेयो लिखती है—"In fact, so far are they from seeing good and evil as we see good and evil, that the mother...will practice upon her child—the girl 'to make her sleep well', the boy 'to make him manly', an

abuse which the boy, at least, is apt to continue daily for the rest of his life."

"ये लोग अच्छाई-बुराई के वह अर्थ नहीं लगाते, जो हम लगाते हैं, इसलिये एक मा अपनी लड़की को गाढ़ निद्रा में सुलाने और लड़के को पुरुष बनाने के लिये उन पर (हस्त-मैथुन) करती है, जिस बुराई को कम-से-कम लड़का प्रतिदिन जीवन-भर जारी रखता है।"

इन वाक्यों को पढ़कर किस भारतीय की आँखों में खून नहीं उतर आएगा। भारतीय देवियों पर यह कलंक! माताएँ स्वयं अपने लड़के-लड़कियों को खराब करती हैं—यह ऐसा झूठ है, जिसे पढ़कर पुस्तक फाड़ डालने को जी चाहता है! ऐसा झूठ गढ़ सकनेवाली के शब्द-कोष में सच-झूठ का क्या अर्थ होगा? फिर लिखा है—

"...the beginning of the average boy's sexual commerce barely awaits his ability...Mr. Gandhi has recorded that he lived with his wife, as such, when he was 13 years old, and adds that if he had not, unlike his brother in similar case, left her presence for a certain period each day to go to school, he would either have fallen

a prey to disease and premature death or have led a burdensome existence."

"सामान्यतः लड़के का स्त्री-संबंध कच्ची उम्र में हो जाता है...मि० गांधी (यंगइंडिया ७ जनवरी १६२७) ने लिखा है कि वे १३ वर्ष की आयु में ही इस प्रकार का जीवन बिता रहे थे। गांधीजी लिखते हैं कि यदि वे स्कूल जाने के समय प्रतिदिन स्त्री को छोड़कर न जाते, तो या तो किसी बीमारी के शिकार हो जाते, या छोटी उम्र में मर जाते, या बुरी हालत में होते।"

गांधीजी को क्या मालूम था कि उनकी जीवनी का यह सदुपयोग किया जायगा। ५० साल पहले यह बात होगी, पर अब बाल-विवाह की प्रथा उठती जा रही है। यह मिस मेयो को न पता चला। ब्रह्मचर्य के विषय में एक हिंदू-बैरिस्टर से मिस मेयो की निम्न बातचीत हुई—

'My father', said an eminent Hindu barrister, 'taught me wisely, in my boyhood, how to avoid infection.'

'Would it not have been better', I asked, 'had he taught you continence.'

'Ah, but we know that to be impossible.'

एक प्रसिद्ध हिंदू-बैरिस्टर ने मुझसे कहा—"मेरे पिता ने बचपन में ही बड़ी बुद्धिमत्ता से मुझे सिखा दिया था कि प्रजनन-संबंधी बीमारियों से कैसे बच सकते हैं।"

मिस मेयो ने पूछा—"क्या यह अच्छा न होता, यदि तुम्हारा पिता तुम्हें ब्रह्मचर्य की शिक्षा देता ?"

उसने कहा—"ओह ! ब्रह्मचर्य तो, हम लोग जानते हैं, एक असंभव चीज़ है।"

यदि यह घटना ठीक है, जिस पर हमें रत्ती-भर भी विश्वास नहीं, तो मिस मेयो के साथ किसी भी पुरुष का इस प्रकार की बातचीत कर सकना मिस मेयो पर भी कम प्रकाश नहीं डालता। भारतवर्ष का आदर्श 'ब्रह्मचर्य' है, ये बैरिस्टर महोदय बैरिस्टरी के साथ-साथ इन गंदे विचारों को योरप से लाए होंगे, ये विचार उन्हें इस देव-भूमि से नहीं मिले।

भारतीयों की शारीरिक शक्ति के ह्रास का वर्णन करते हुए लिखा है—"After the rough outlines just given, small surprise will meet the statement that from one end of the land to the other the average male Hindu of 30 years, provided he has means to command his pleasure, is an old

man, and that from 7 to 8 out of every 10 such males between the ages of 25 and 30 are impotent."

"ऊपर जो संक्षिप्त खाका खींचा गया है, उसके बाद यह कहते हुए आश्चर्य नहीं होता कि भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक ३० वर्ष की आयु में हिंदू, यदि वह समृद्ध हो, तो बूढ़ा हो जाता है और इस प्रकार के प्रत्येक १० पुरुषों में से ७ या ८ नपुंसक होते हैं।" "इसके लिये प्रमाणों की आवश्यकता हो, तो अखबारों के विज्ञापनों पर, जिनके मालिक हिंदुस्तानी हैं, दृष्टि डाल लो। नपुंसकों को जादू के चमत्कारों से पौरुष देनेवालों के इश्तिहारों से क़ालम-के-क़ालम रँगे रहते हैं।" तभी भारत की जन-संख्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही है?

यदि किसी स्त्री के बच्चा न होता हो, तो—"In case, however, of the continued failure of the wife—any wife—to give him a child, the Hindu husband has a last recourse; he may send his wife on a pilgrimage to a temple, bearing gifts. And, it is affirmed, some castes habitually save time by doing this on the first night after

the marriage. At the temple by day, the woman must beseech the god for a son, and at night she must sleep within the sacred precints. Morning come, she has a tale to tell the priest of what befell her under the veil of darkness."

"'Give praise, Oh daughter of honour, it was the God', replies the priest. And so she returns to her home."

"बच्चा न होने की हालत में हिंदु-पति के पास एक रास्ता है। वह अपनी स्त्री को कुछ उपहार लेकर धार्मिक यात्रा के लिये किसी मंदिर में भेज सकता है। कहते हैं, कई जातियाँ तो समय बचाने के लिये शादी की पहली रात को ही स्त्री को मंदिर में भेज देती हैं। मंदिर में दिन को तो स्त्री पुत्र-प्राप्ति के लिये देवता का आराधन करती है, और रात को मंदिर में ही सोती है। प्रातःकाल होता है और वह पुजारी को रात की घटना सुनाती है; अँधेरे में उसके साथ क्या-क्या हुआ! पुजारी कहता है, हे सती! देवता की स्तुति कर—यह स्वयं परमात्म-देव थे! और इस प्रकार स्त्री अपने घर को लौट आती है।"

तीसरे अध्याय में मिस मेयो ने बाल-विवाह के तीन

कारण बतलाए हैं—(१) प्रथा, (२) हिंदुओं के घर में कई लड़के भी रहते हैं, इसलिये कहीं हाथ से निकलने से पहले लड़की दूषित न हो जाय, यह भय, और (३) यौवन के बाद लड़की की जागती हुई प्रबल कामना। Age of Consent Bill 'स्वीकृति की आयु के बिल' पर १६२५ में हुए एसेंबली के विवाद को उद्धृत करते हुए उसने दर्शाया है कि मदनमोहन मालवीय-जैसे नेताओं ने भी स्वीकृति की आयु के १४ वर्ष किए जाने का घोर विरोध किया। इसका उत्तर मालवीयजी ही दें! हाँ, बाल-विवाह के पिछले जो दो कारण बतलाए गए हैं, वे इस मिस की नीचता को सिद्ध करते हैं। हिंदुओं के घर में, जो लड़के रहते हैं, वे या तो लड़की के भाई होते हैं, या नज़दीकी रिश्तेदार!—उनसे डर? यह भारतवर्ष के लिये नया विचार है, जो कि मिस मेयो के दिमाग़ में उपजा है। हाँ, योरप में ज़रूर भाई-बहन तक में परदा नहीं रहता। डॉ० मौल अपनी पुस्तक के २१२ पृष्ठ पर लिखते हैं—

"In many cases brothers and sisters arrange to satisfy one another's curiosity on this point. Elder brother, and younger, or brother and sister, will often seek to enlighten one another..."

माता-पिता लड़की की काम-वासना को रोक नहीं सकते,

इसलिये उसका विवाह जल्दी कर देते हैं; यह ऐसा लांछन है जिसका उत्तर—'त्राहि माम्','त्राहि माम्' के अतिरिक्त कुछ नहीं दिया जा सकता। यह कैसी स्त्री है, जो दूसरे देश की अपनी बहनों के संबंध में इतना बड़ा झूठ लिखने के लिये तैयार हो सकती है! किसी का 'रुपया बिना खाए' निःस्वार्थ भाव से ऐसा झूठ बोलने की हिम्मत मिस मेयो में ही है! Age of Consent का बिल एसेंबली में गिर गया, इस पर मारगरेट कज़न्स लिखती हैं—"भारत का जाग्रत स्त्री-समाज पिछले १० वर्षों से 'स्वीकृति की आयु' बढ़ाने का सरकार से अनुरोध कर रहा है। राजा राममोहन राय के समय से समाज-सुधारक दल भी इसके लिये प्रयत्नशील है। एक ही ज़िले से १० हज़ार स्त्रियों ने इसके लिये सरकार के पास प्रार्थना-पत्र भेजा है। दूसरी जगह की ७ हज़ार स्त्रियों ने सरकार से अनुरोध किया है कि १६ वर्ष से पहले लड़की की शादी को दंडनीय समझा जाय। इन सब बातों का मिस मेयो ने कहीं ज़िक्र तक नहीं किया। इसके स्थान पर वह यहाँ तक झूठ बोलने पर उतारू हो गई है कि यह बिल हिंदुओं की विमति के कारण गिरा दिया गया। असल बात यह थी कि जहाँ तक आयु बढ़ाने का प्रश्न था, सरकारी सदस्यों के विरोध करने पर भी, वह अंश स्वीकृत हो गया था, परंतु नियम को तोड़ने

पर दंड कितना रक्खा जाय, इस प्रश्न के आने पर यह बिल गिर गया। यदि एसेंबली के सरकारी सदस्य बिल का विरोध न करते, तो १४ वर्ष की लड़कियाँ माता बनती हुई दिखाई न देतीं। हम स्त्रियाँ, ब्रिटिश सरकार पर दोषारोप करती हैं कि जिन सुधारों के लिये देश तैयार है, उन्हें लाने में वह जान-बूझकर देरी कर रही है।" इस प्रकरण में एक और बात ध्यान देने योग्य है। इधर तो 'स्वीकृति की आयु' पर एसेंबली में इतना विवाद दिखाई देता है, परंतु पिछले साल मौर्वी-राज्य में, जो एक छोटी-सी देसी रियासत है, क़ानून द्वारा 'स्वीकृति की आयु' १६ साल कर दी गई है। क्या एक देसी शासक का यह प्रशंसनीय कार्य सिद्ध नहीं करता कि शासन-नियमों का अधिकार भारतवासियों के हाथों में आते ही समाज-सुधार में भी वे पिछड़े नहीं रहेंगे?

इसके अतिरिक्त भारतवर्ष ही ऐसा देश नहीं, जिसमें 'Age of Consent' इतनी छोटी उम्र में हो। अमेरिका के कई हिस्सों में स्वीकृति की आयु ८ वर्ष है। इलिस महोदय 'Sex in Relation to Society' के ५२८ पृष्ठ पर लिखते हैं—"There has been, during recent years, a wide limit of variation in the legislation of the different American States on this point, the difference

of the two limits being as much as eight years, and in some important States.........eighteen is declared to be 'rape'..." अर्थात्, "हाल ही के सालों में 'स्वीकृति की आयु' के संबंध में अमेरिका की भिन्न-भिन्न रियासतों के क़ानूनों में बहुत भेद दिखाई दे रहा है। कई जगह आठ वर्ष की अवधि है, तो कई जगह १८ वर्ष से छोटी लड़की के साथ संबंध को नियम-विरुद्ध ठहराया गया है।"

हाल ही में, ग्रेट ब्रिटेन में, 'विमेंस सोशल कौंसिल' का एक डेप्यूटेशन गृह-सचिव के पास इसलिये गया कि वहाँ लड़के-लड़कियों की शादी की आयु पर प्रतिबंध लगाया जाय। उस डेप्यूटेशन की एक सदस्या मिस ग्रे थीं। उन्होंने लिखा है—"We hear a good deal about child-marriages in India, but while the home country allows its children to marry at 12 years of age (for girls) and 14 years (for boys) there is little hope of such legislation being introduced in India and other countries where it is vitally necessary."—

अर्थात् "जब इँगलैंड में ही लड़कियाँ क़ानूनन १२ वर्ष और लड़के १४ वर्ष में शादी कर सकते हैं, तब भारतवर्ष से

क्या आशा की जा सकती है।" १९२४ में दो लड़कियों की १४ वर्ष में और १९ की १५ वर्ष में शादी हुई, १९२५ में भी दो की १४ और २४ की १५ वर्ष में शादी हुई, १९२६ में ४ लड़कियों की १४ और ३५ की १५ वर्ष में शादी हुई। यह ग्रेट-ब्रिटेन की कहानी है, जिसकी वकालत 'मदर-इंडिया' में की गई है!

मिस मेयो ने चौथे अध्याय का शीर्षक 'Early to Marry and Early to Die'—'जल्दी शादी करो और जल्दी मर जाओ'—रक्खा है। बाल-विवाह के पोषकों के पास इसका क्या जवाब है? क्या मिस मेयो के चैलेंज का वे कुछ जवाब देंगे? मैं चाहती हूँ कि हम इस प्रथा को दूर कर सकें!

पाँचवें अध्याय में लिखा है—"Most of the women are very young. Almost all are venereally affected."

यह एक हस्पताल का जिक्र है—"इनमें से बहुत-सी बिलकुल युवती हैं। प्रायःसभी प्रजनन-संबंधी बीमारियों से आक्रांत हैं।" इसी प्रकार एक अँगरेज स्त्री-चिकित्सक ने मेयो से कहा—"मेरे बीमार विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों की स्त्रियाँ हैं। प्रायः सभी को प्रजनन-संबंधी रोग हैं। जब मैं भारतवर्ष में आई थी, मैं लड़कियों के पिताओं से जाकर उनकी लड़की की हालत कह देती थी, क्योंकि मुझे आशा थी

कि वे अपनी लड़की के कल्याण के लिये कुछ करेंगे; परंतु बातचीत करने पर मुझे मालूम पड़ता था कि माता-पिता को अपनी लड़की के पति की अवस्था का शादी से पहले ही ज्ञान था और फिर भी उन्हें इसमें शर्म नहीं आती थी, और न वे इसमें कुछ दोष ही समझते थे। यह देखकर मैंने उन लोगों से कहना ही छोड़ दिया।" एक मदरास की डॉक्टरनी ने कहा— "मैं हजारों स्त्रियों का इलाज करती हूँ। मैंने एक स्त्री भी नहीं देखी, जिसे प्रजनन-संबंधी (Venereal) बीमारी न थी।"

उक्त कथनों में मिस मेयो की मिलावट कितनी है और यथार्थ कहा कितना गया है, इसका निर्णय नहीं हो सकता। चालाक मिस ने नाम एक का भी नहीं दिया। यह हम पहले ही लिख चुके हैं कि जहाँ-जहाँ उसने नाम दिए हैं, वहाँ-वहाँ लोगों ने उन बातों के कहे जाने की सत्यता से इनकार किया है। परंतु हो सकता है, हस्पताल में ऐसे रोगी जाते हों। आखिर हस्पताल तो इसी काम के लिये हैं। इससे क्या सब रोगी सिद्ध हो जाते हैं ? इन बीमारों से भारतीय जनता के विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता। हाँ, जनता के विषय में कथन निम्न प्रकार के होते हैं। 'The Sexual Life of Our Time' के लेखक ब्लौच महाशय ३९२ पृष्ठ पर लिखते हैं—

"From these we learn that Denmark, Germany, German Austria and Switzerland, show the most favourable conditions; next come Belgium, France, Spain, Portugal, North and Middle Italy. Worst of all are the conditions in Southern Italy, Greece, Turkey, Russia, and —England."

"प्रजनन-संबंधी रोग डेनमार्क, जर्मनी, जर्मन-आस्ट्रिया आदि में है। यह रोग बुरी हालत में दक्षिणी इटली, ग्रीस, टर्की, रूस तथा इँगलैंड में पाया जाता है।"

यहाँ अच्छी हालत डेनमार्क की बतलाई गई है। उसकी राजधानी के विषय में लिखते हुए ब्लौच महाशय लिखते हैं—

"In those last ten years, for every 100 young men living, there have been 119 infections during ten years; that is to say, on the average every one has been infected once, and a great many have been infected more than once."

"पिछले दस वर्षों में १०० आदमियों में से ११६ को प्रजनन-संबंधी बीमारी हुई है; अर्थात्, सामान्यतया हर एक आदमी को एक बार तो रोग हो ही चुका है, परंतु कइयों

को दो बार हुआ है।" आगे बर्लिन के विषय में ब्लौच महाशय लिखते हैं—

"It further appears that of the men who entered on marriage for the first time when above the age of 30 years, each had, on the average, had gonorrhœa twice, and about one in four or five had been infected with syphilis."

"गणना से ज्ञात होता है कि बर्लिन में ३० वर्ष के बाद जिन लोगों ने पहली शादी की, उन सबको दो बार 'गनोरिया' की बीमारी हो चुकी थी, और प्रत्येक ४ या ५ में से एक को 'सिफलिस' की बीमारी हो चुकी थी।"

और फिर इँगलैंड के विषय में, तो ब्लौच महाशय लिख ही चुके हैं कि उसकी दशा सभी देशों से बुरी है!

अमेरिका के विषय में, जहाँ की मिस मेयो हैं, लिखते हुए, एलिस महोदय अपनी पुस्तक 'Analysis of the Sexual Impulse' के २२४ पृ० पर लिखते हैं—"Wolbarst, studying the prevalence of gonorrhœa among boys in New York states—In my study of this subject there have been observed 3 cases of gonorrheal urethritis, in boys aged, respectively, 4, 10 and

12 years, which were acquired in the usual manner, from girls ranging between 10 and 12 years of age. In each case, according to the story told by the victim, the girl made the first advances..."

"बौलवार्स्ट महोदय न्यूयार्क के लड़कों में 'गनोरिया' पर लिखते हुए कहते हैं कि उन्हें तीन ऐसे रोगी मिले, जिन्हें ४, १० और १२ वर्ष की आयु में यह बीमारी थी। पूछने पर मालूम हुआ कि १० या १२ साल की आयु की लड़कियों से उन्हें यह बीमारी लगी और प्रत्येक अवस्था में पहले लड़की की तरफ़ से हुई!"—यह है 'न्यूयार्क' की कहानी!

एलिस महोदय अपनी पुस्तक 'Sex in Relation to Society' के ३२६ पृष्ठ पर 'Civilization (सिविलिजेशन) को 'Syphilization' (सिफ़िलिज़ेशन) बतलाते हैं और लिखते हैं—"In America a Committee of the Medical Society of New York appointed to investigate the question, reported as the result of exhaustive inquiry that in the city of New York not less than a quarter of a million of cases of venereal disease occurred

every year, and a leading New York dermatologist has stated that among the better class families he knows intimately at least one-third of the sons have had syphilis. In Germany eight hundred thousand cases of venereal disease are by one authority estimated to occur yearly, and in the larger universities twenty-five per cent. of the students are infected every term, venereal disease being, however, specially common among students......Yet the German army stands fairly high as regards freedom from venereal disease when compared with the British army which is more syphilized than any other European army...Even within the limits of the English army it is found in India that venereal disease is ten times more frequent among British troops than among Native troops ......Stritch estimates that the cost to the British nation of venereal diseases in the army, navy and Government departments alone, amounts annually to £ 3,000,000...... the

more accurate estimate of the cost to the nation is stated to be £ 7,000,000."

"अमेरिका की एक कमेटी का कहना है कि न्यूयार्क में प्रतिवर्ष अढ़ाई लाख से ज्यादा लोगों को प्रजनन-संबंधी रोग होता है। एक त्वमोगश्च का, जो न्यूयार्क का रहनेवाला है, कथन है कि उच्च घराने के लोगों के लड़कों में से, जिन्हें वह भली प्रकार जानता है, कम-से-कम एक तिहाई को 'सिफ़िलिस' है। जर्मनी में आठ लाख को प्रतिवर्ष प्रजनन-संबंधी रोग होते हैं। वहाँ के विश्वविद्यालयों में २५ प्रतिशतक विद्यार्थियों को प्रति-सत्र ये रोग होते हैं......जर्मन-फ़ौज का सिफ़िलिस की दृष्टि से अँगरेज़-फ़ौज से, बहुत अच्छा हाल है। अँगरेज़ सेना तो योरप के सभी देशों से गई बीती है। ब्रिटिश-सेना में भी भारतीय सैनिकों की अपेक्षा अँगरेज़-सैनिकों में यह बीमारी दसगुना ज्यादा फैली हुई है।......स्ट्रिच महोदय ने हिसाब लगाया है कि अँगरेज़ों का आर्मी, नेवी तथा सरकारी विभाग में ही प्रजनन-संबंधी बीमारियों का ठीक-ठीक बजट ७० लाख पौंड (दस करोड़ रुपए के लगभग) प्रतिवर्ष है।"

जिन देशों की यह अवस्था है, वहाँ से एक महिला आकर भारत की देवियों पर लांछन लगाने का साहस करती है! जब सब कल तो हमने यहाँ बैठे-बैठे लिख डाला है!!

अमेरिका तथा इँगलैंड जाकर देखा जाय, तो न-जाने क्या-क्या गुल खिलें।

इस अध्याय को समाप्त करने से पहले मिस मेयो लिखती है कि उसे एक डॉक्टर ने बतलाया—"They commonly experience marital use two and three times a day."

"वे प्रायः दिन में दो-तीन बार संयोग करते हैं !"—मिस मेयो ने लेखनी की लगाम को खुला छोड़कर लिखा है। इस प्रकार की बातें, जो गंद में और झूठ में एक दूसरे से मुक़ाबिला करती हैं, एक योरपियन महिला की क़लम से ही निकल सकती हैं। इन्हीं बातों में 'मदर-इंडिया' का प्रथम भाग समाप्त हो गया है!

द्वितीय भाग

मिस मेयो लिखती हैं कि उससे किसी बूढ़े हिंदू-जमींदार ने कहा—"मेरे १२ बच्चे हुए। १० लड़कियाँ थीं, वे भला कैसे जीतीं ? इतना खर्चा कौन बर्दाश्त करता ? दो लड़के थे ; बस, उन्हें मैंने बचा लिया।"

सर माइकल ओडवायर जब भरतपुर रियासत का 'सेटलमेंट ऑफ़िसर' था, उस समय की एक घटना का वर्णन उसने अपनी पुस्तक 'India As I Knew It' में किया है। उसका उल्लेख भी मिस मेयो ने इस सिलसिले में कर दिया है। घटना का वर्णन ओडवायर ने इस प्रकार किया है—"महाराजा की बहन की पंजाब के किसी बड़े सरदार से शादी होनेवाली थी। महाराजा उस समय बहुत छोटा था, इसलिये घरवाले लोग ज़ोर डाल रहे थे कि इस अवसर पर बड़े लोगों को जितना खर्च करना चाहिए, उतना किया जाय, अर्थात् ३०-४० हज़ार पौंड। रियासत की कौंसिल के जो स्थानीय सदस्य थे, वे इसके पक्ष में थे। उस समय रियासत ब्रिटिश-सरकार की देख-रेख में थी, इसलिये पोलिटिकल एजेंट ने और मैंने ऐसे दुष्काल के समय इतना अपव्यय करने का घोर विरोध

किया। अंत में मामला मरी कौंसिल के सामने रक्खा गया। मैंने कौंसिल के सबसे पुराने सदस्य से पूछा कि ऐसे अवसरों पर पहले कितना व्यय होता रहा है ? उसने सिर हिलाकर कहा 'ऐसा पहला कोई अवसर ही नहीं आया।' वृद्ध महानुभाव कुछ देर तक चुप रहे, फिर बोले—'साहब, आपको हमारी प्रथाओं का पता ही है, आपको इसका कारण मालूम ही होगा ! लड़कियाँ पैदा तो जरूर हुई थीं, परंतु इस संतति तक कभी किसी लड़की को जिंदा ही नहीं रहने दिया गया'।"

क्या महाराज भरतपुर ने 'मदर-इंडिया' में यह घटना पढ़ी है ? यदि सचमुच ऐसा होता रहा है, तो बड़े खेद की बात है। परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि ऐसी अवस्था भारतवर्ष में आम पाइ जाती है। ऐसा होता, तो भारत में ३१ करोड़ आबादी काहे को दिखाई देती ! इसमें शक नहीं कि कई लोगों का लड़कियों के प्रति वह ध्यान नहीं, जो लड़कों के प्रति होता है। स्त्री-जाति के प्रति इस उपेक्षा को हमें दूर अवश्य करना चाहिए।

मेयो ने किसी हस्पताल में 'स्वयं देखी हुई' एक घटना लिखी है। वह कहती है कि यह बंगाल की घटना है—"पाँच-छः वर्ष की एक लड़की कुएँ में गिर गई। माता उसे लेकर

हस्पताल में दौड़ी-दौड़ी आई। एक-दो दिन में अवस्था भयानक हो गई। लड़की की हालत बिगड़ रही थी, उसकी अम्मा पास बैठी थी और परमात्मा से प्रार्थना कर रही थी। इतने में एक बंगाली बाबू, जो क्लर्क-सा जान पड़ता था, आया और डॉक्टरनी से बोला—

'मिस साहब! मैं अपनी स्त्री को लेने आया हूँ।'

'तुम्हारी स्त्री', डॉक्टरनी ने चिल्लाकर कहा। 'अपनी स्त्री की हालत देखो, अपनी लड़की की तरफ आँख उठाकर देखो—क्या तुम्हें कुछ होश नहीं है?'

'क्यों नहीं, पर, मैं अपनी स्त्री को घर ले जाने के लिये आया हूँ। विवाह-संबंध का जो उचित उपयोग है (For my proper marital use) उसके लिये मैं चाहता हूँ, वह मेरे साथ घर चले।'

'परंतु यदि तुम्हारी स्त्री इस समय चली जायगी, तो लड़की मर जायगी—तुम इन दोनों को जुदा नहीं कर सकते; देखो'—इतने में लड़की, जो अपने पिता की धमकियों को समझती-सी जान पड़ी, अपनी मा के साथ चिपट गई और चिल्लाने लगी।

स्त्री ने दंडवत्-प्रणाम करके, घुटने पकड़कर, पाँव चूमकर, दोनों हाथ जोड़कर, पति के पाँव की रज माथे पर लगा-

कर बार-बार कहा—'मेरे स्वामी, 'दया करो, करुणा करो।'

"चलो-चलो, मुझे तुम्हारी जरूरत है, तुम्हें मुझसे जुदा हुए बहुत देर हो गई है।'—बाबू ने कहा।

'मेरे स्वामी, बच्चे की हालत देखो !'—स्त्री ने करुणा-स्वर में रुदन करते हुए कहा।

बाबू ने अपनी सुकोमलांगी पत्नी को पाँव से ठुकरा दिया और कहा—'मुझे जो कहना था कह चुका'—और बाबू चुपचाप बाहर चला गया। स्त्री उठी; लड़की चिल्लाई। डॉक्टरनी ने पूछा—'क्या तुम चली जाओगी ?' स्त्री ने आह भरते हुए कहा—'मैं आज्ञा उल्लंघन नहीं कर सकती।' वह उठी, मुँह पर परदा किया और अपने पति के पीछे दौड़ती हुई हस्पताल से बाहर हो गई।"

इस घटना को पढ़कर कितने ही भाव दिल में उठते हैं। आखिर, हम भी तो भारतवर्ष को जानते हैं। यदि कोई कहता कि यह घटना अमेरिका या इँगलैंड में हुई, तो हमें इतना अचंभा न होता, क्योंकि जहाँ तक समाचार-पत्रों से ज्ञात हो सकता है, वहाँ के स्त्री-पुरुषों का वैवाहिक संबंध पाशविक सिद्धांतों पर ही आश्रित है। यदि कोई कहे कि भारतवर्ष में यह घटना हुई, तो भारतवर्ष को, और वहाँ के

स्त्री-पुरुषों में विवाह-विषयक जो उच्च-विचार काम कर रहे हैं उन्हें जानता हुआ व्यक्ति इसमें विश्वास नहीं कर सकता। कम-से-कम इस घटना को भारतीय जीवन का सूचक नहीं कहा जा सकता। भारत का कोई भी युवक किसी डॉक्टरनी के सम्मुख उन शब्दों का प्रयोग नहीं कर सकता, जिनका प्रयोग उक्त घटना में बाबू ने किया है।

मिस मेयो इसके आगे पद्म-पुराण के उस वाक्य की खिल्ली उड़ाती है, जिसमें लिखा है कि पति चाहे कैसा ही क्यों न हो, चोर हो, जार हो, व्यभिचारी हो, जुआरी हो, पागल हो, वह स्त्री के लिये देवता ही है।

इसमें संदेह नहीं कि भारत की सतियों ने अपने पति को सदा देवता ही माना है; क्या पतियों का कर्तव्य नहीं कि वे, इन उच्च आदर्शों में जीवन बिता देनेवाली, देवियों के योग्य बनने का प्रयत्न करें? इसके उत्तर का भार मैं भारतवर्ष के पुरुष-समाज के लिये यहीं छोड़ देती हूँ।

विवाह-संबंध के बाद सुसराल में लड़की की, जो दुर्गति बनाई जाती है, उसका चित्र मिस मेयो ने यों खींचा है—"हिंदू-विवाह का अभिप्राय यह नहीं है कि नई गृहस्थी खुले। वह छोटी-सी बच्ची, जिसे वधू कहा जाता है, वर के माता-पिता की गृहस्थी में ही शामिल कर ली जाती है। वहाँ एकदम

उसकी स्थिति अपनी सास की नौकरानी की हो जाती है। उसके हरएक हुक्म को उसे बजाना होता है। ससुर और ननद भी उसे जो चाहती हैं, कहती हैं। लड़की को शिक्षा ही ऐसी मिली होती है कि वह चूँ तक नहीं कर सकती। 'वह सिर ऊँचा उठा सकती है या उसे किसी प्रकार की स्वतंत्रता मिल सकती है—इस विचार का उसके मन में बीज तक नहीं होता। सास की भृकुटि सदा तनी रहती है, उसके शासन में दया या प्रेम को जगह नहीं होती। यदि दुर्भाग्य से 'बच्ची' को बच्चे पैदा करने में देर लगे, या उसके लड़कियाँ ही होने लगें, तब तो बूढ़ी सास की जीभ कटार हो जाती है, उसके हाथों की मार कड़ी हो जाती है, वह आए-दिन नई बहू लाने की धमकियाँ उगल-उगलकर उस बेचारी के जीवन को अंधकारमय बना देती है, क्योंकि हिंदू-नियम के अनुसार दुबारा शादी करके प्रथम स्त्री की जड़ उखेड़ डालना या उसे दासी बना लेना जायज़ है।"

मैं अनुभव से कह सकती हूँ कि कई सासें बहू को अपनी लड़की से भी ज्यादा प्यार से रखती हैं, परंतु फिर भी अधिकांश संख्या का चित्र मिस मेयो ने ठीक खींचा है। मैं चाहती हूँ कि भारतवर्ष का सास-समुदाय इन वाक्यों को पढ़े और अपनी बहुओं के साथ लड़ने के स्थान में मिस मेयो के साथ

लड़ने की तैयारी करें। मिस मेयो का कहना है कि पुलिस के खातों में १४-१६ वर्ष की बहुत-सी युवतियों की आत्म-हत्या की रिपोर्ट मिली। खाते खुलवाकर देखा गया, उनमें लिखा था—"पुराना पेट-दर्द और सास के साथ झगड़ा, आत्महत्या का कारण है!"

स्त्रियों की दुर्दशा पर मिस सोराबजी ने 'Between The Twi-lights' पुस्तक में कुछ लिखा है। मिस मेयो ने उसका भी यहाँ नक़ल कर दिया है। मिस सोराबजी लिखती हैं—"जब हिंदू-स्त्री किसी लड़के की माता बन जाती है, तब उसकी कुछ क़द्र होने लगती है, और जनाने की दूसरी स्त्रियों की अपेक्षा उसका दर्जा ऊँचा हो जाता है।...वह कृतकृत्य हुई, उसने अपनी जरूरत साबित कर दी। बच्चे की मा बनकर उस स्त्री के मुख पर आत्मगौरव की रेखा झलकने लगती है। अब भी वह अपने पति की आज्ञाकारिणी दासी ही रहती है, परंतु अब वह अपनी 'सत्ता' अनुभव करने लगती है, हिंदू-जमाने में जहाँ तक संभव है, वह अपने 'व्यक्तित्व' का अनुभव करती है। जो स्त्रियाँ उसे ताने दिया करती थीं, उनकी तरफ़ वह आँख उठाकर देख सकती है, उसके हृदय में अब सौतिन का डर नहीं रहता।"

यह सब कुछ पढ़कर समझ पड़ने लगता है कि मिस मेयो ने कहीं-कहीं सत्य को बिलकुल तलाक़ नहीं दिया! परंतु इतने में वह एक चुटकुला और छोड़ देती है, जिससे पाठक के मन की अवस्था उसके प्रति फिर वैसी-की-वैसी हो जाती है। वह लिखती है—"She has not the vaguest conception how to feed him or develop him. Her idea of a sufficient meal is to tie a string around his little brown body and stuff him till the string bursts."

"भारतीय माता को ज़रा भी मालूम नहीं कि बच्चे को किस प्रकार खिलाना और उसकी परवरिश करना चाहिए। पेट भरकर भोजन करने का मतलब वह यह समझती है कि बच्चे के पेट के चारों तरफ़ रस्सी बाँध दी जाय और उसके पेट को तब तक भरा जाय, जब तक रस्सी टूट न जाय।"

मिस मेयो से हरएक भारतवासी पूछ सकता है, क्या यह बात चुटकुले के तौर पर लिखी गई है या सचमुच उसने यहाँ पेट भरने के लिये इस विचित्र प्रकार को अपनी आँखों से देखा है?

७वें अध्याय में मिस लिखती है कि उससे एक हिंदू ने

कहा—"We husbands so often make our wives unhappy that we might well fear that they would poison us. Therefore did out wise ancestors make the penalty of widowhood so frightful in order that the woman may not be tempted."

"हम पति लोग अपनी स्त्रियों को इसलिये दुःखी रखते हैं कि वे हमें विष न दे दें। इसीलिये हमारे बुद्धिमान् पूर्वजों ने वैधव्य की इतनी दुर्दशा की है, ताकि पत्नी को विष देने का कभी प्रलोभन ही न हो।"

यदि हिंदुओं को अपनी स्त्रियों से विष दिए जाने का सदा भय रहा करता, तो शायद उनके घरों में चौका-चूल्हा दिखाई न देता, और वे योरपियनों की तरह होटलों में ही जीवन बिताया करते, यदि सचमुच यह बात किसी हिंदू ने उसे बताई है, तो झूठ बताई है। हाँ, भारत में विधवाओं की दुर्दशा अवश्य की जाती है, और उसके प्रायश्चित्त में उसे 'मदर-इंडिया'-जैसे थप्पड़ भी खाने पड़ते हैं!

स्त्रियों के प्रति हिंदुओं की हृदय-हीनता का मर्मवेधी वर्णन करते हुए मिस मेयो लिखती है—"जब सती-प्रथा के हटाए जाने का ब्रिटिश-सरकार प्रयत्न कर रही थी, उस समय इस

घृणित प्रथा को वैसे-का-वैसा बनाए रखने के लिये इन लोगों ने प्रिवी कौंसिल तक के दरवाजों को खटखटाया था। इस समय भी बाल-विवाह तथा दहेज आदि की कुप्रथाओं के दैत्यों पर कई लड़कियाँ, जीवित-जाग्रत, साड़ी में आग लगाकर बलि चढ़ गई हैं। परंतु अब भी, इस हतभाग्य देश में, ऐसे लोग मौजूद हैं, जो इन दृष्टांतों से कुछ सबक सीखने के स्थान में बालिका के मृदुल अंगों से उठती हुई लपटों को देखकर उनमें सतीत्व की ज्योति झलकती देखते और हर्ष के आँसू बहाते हैं! १९२५ में भारतवर्ष में २६,८३४,८३८—अढ़ाई करोड़ से ज्यादा—विधवाएँ मौजूद थीं!"

मिस मेयो की पुस्तक के ८वें अध्याय का शीर्षक 'Mother India' है। धाया का वर्णन करते हुए लिखा है—"यह घृणित कार्य समझा जाता है, और अछूत जाति की स्त्री ही धाया का काम करती है। जिस समय बच्चा पैदा होनेवाला हो, उस समय धाया को ख़बर भेजी जाती है। यदि वह अच्छे कपड़े पहने होती है, तो उन्हें उतारकर एकदम पुराने कपड़े, जो इसी काम के लिये रक्खे होते हैं—जो पिछली बार बच्चा उत्पन्न होने पर भी पहने गए थे और जिनमें न-जाने कितने कृमि मौजूद हैं—पहनकर आ जाती है। एक छोटी-सी अँधेरी कोठरी में, स्त्री को, ज़मीन तक

लटकते हुए ढीले बानोंवाली चारपाई पर डाल दिया जाता है। घर के मैले-कुचैले, फटे कपड़ों से उसका बिस्तर बनाया जाता है। उस कोठरी में धाया प्रवेश करती है। यदि कहीं दीवार में छिद्र हो, तो वह उसे गोबर से बंद कर देती है। इस विषैले वायु-मंडल में वह एक धुएँदार मिट्टी के तेल की बत्ती को, जिस पर चिमनी भी नहीं होती, जलाती है। यदि बच्चा पैदा होने में देर हो, तो वह अपने गंदे हाथों को, जिनके नाखून भी कटे नहीं होते, स्त्री के गर्भाशय में डाल-डालकर अंदर के कोमल अंगों का आपरेशन-सा कर देती है। कई युवतियाँ तो इन्हीं दाइयों की भेंट चढ़ जाती हैं।" सच-मुच यह वर्णन हृदय को कँपा देनेवाला है।

मिस मेयो इसी सिलसिले में लिखती है—"हिंदुओं में विश्वास है कि यदि कोई स्त्री, बच्चे पैदा होने से पहले ही मर जाय, तो वह भूत बन जाती है, उसके पैर पीछे को होते हैं, वह उसी घर में इधर-उधर घूमा करती है। इसलिये यदि कोई स्त्री इस अवस्था में होती है, तो दाया उस घर को ऐसे भूत से बचाने के लिये मरणासन्न स्त्री की आँखों में पहले मिर्च मलती है, ताकि आत्मा अंधी हो जाय और उसे रास्ता ही न मिले। फिर वह दो लंबी-लंबी लोहे की कीलें लेती है, और उस बेचारी के छोड़े हुए हाथों को फैलाकर—

क्योंकि ऐसी अवस्था में वह स्त्री भी अपने भाग्य को जानती है, और उसे बिना कुछ किए स्वीकार करती है—प्रत्येक हथेली में से ज़ोर से कीलों को फ़र्श में गाड़ देती है। इसका यह अभिप्राय है कि आत्मा फ़र्श में गड़ गई, अब हिल-डुल न सकेगी और घरवालों को किसी प्रकार का कष्ट न दे सकेगी। इस प्रकार वह स्त्री, दीन भाव से परमात्मा का नाम लेती हुई और अपने पिछले जन्म के उन भयंकर पापों का स्मरण करती हुई, जिनके कारण उसे इस जन्म में ये सब यातनाएँ भोगनी पड़ रही हैं, जीवन को समाप्त कर देती है।"

यह घटना उन घटनाओं में से है, जिन्हें महात्मा गांधी के शब्दों में कह सकते हैं कि मिस मेयो ने कई ऐसी बातें लिखी हैं, जिनका साधारणतया हम लोगों को ज्ञान तक नहीं है। क्या सचमुच भारतवर्ष का यही चित्र है ?

मिस मेयो ने लिखा है—"भारतवर्ष में जो बच्चे जीवित पैदा होते हैं, उनमें से २० लाख प्रति वर्ष मर जाते हैं। पैदाइश के पहले महीने में ही ४० प्रतिशतक बच्चों की मृत्यु हो जाती है, और बचे हुओं में से पहले महीने में ६० प्रतिशतक की मृत्यु होती है! बहुत-से बच्चे तो मरे हुए ही पैदा होते हैं, जिसका कारण, सिफ़लिस तथा गनोरिया है।" सिफ़लिस तथा गनोरिया के विषय में पहले पर्याप्त लिखा जा चुका है!

नवाँ अध्याय परदे पर है । प्रारंभ में ही मिस मेयो एक ऐसी बात लिख डालती है, जो भारतीय गाँवों से परिचित व्यक्ति को एक गंदी गाली मालूम पड़ती है । मिस मेयो ने स्वयं स्वीकार किया है कि भारत की ९० प्रतिशतक जनता ग्रामों में रहती है; और यह हम अच्छी तरह जानते हैं कि भारत के ग्रामों में सनातन-काल से यही भाव चले आ रहे हैं कि गाँव के किसी भी व्यक्ति की लड़की सारे गाँव की लड़की है, और किसी भी बहू सारे गाँव की बहू है। माताएँ अपनी लड़की को घर में छोड़ निश्चिंत होकर जिस-किसी भी काम के लिये बाहर जा सकती हैं, और जाती हैं, परंतु फिर भी मिस मेयो ने मानो ज़हर उगलते हुए लिख डाला है—"The Hindu peasant villager's wife will not leave her girl at home alone, for the space of an hour, being practically sure that if she does, so the child will be ruined."

"हिंदू-ग्रामीण की स्त्री अपनी लड़की को एक घंटे के लिये भी अकेली घर पर नहीं छोड़ेगी, क्योंकि उसे पूर्ण निश्चय होता है कि यदि वह ऐसा करेगी, तो लड़की की इज्ज़त खतरे में होगी।"

हमें तो मिस मेयो की बातों पर विक्षोभ इसीलिये होता

है, क्योंकि उसने झूठ जो बोला है, सो तो है ही; परंतु साथ ही इतने गंदे आक्षेप किए हैं, जिन्हें सुनते ही, नफ़रत होती है। इस पुस्तक को पढ़ने से ऐसा मालूम पड़ने लगता है कि भारतवर्ष बदमाशों से भरा हुआ देश है, लड़कियों को सुरक्षित रखने के लिये उनके माता-पिता चौबीसो घंटे पहरा देते रहते हैं, किसी क्षण भी चूक जायँ, तो लुटिया डूब जाती है। मिस मारगरेट कज़न ने लिखा है कि अमेरिका को जानकारों ने 'दुराचार से भरा हुआ देश'—'The most crime-ridden country in the world'—कहा है; *मिस मेयो की पुस्तक पढ़कर जान पड़ता है कि इस कथन में* सचाई अवश्य है। तभी तो अमेरिका की एक स्त्री ने, भारत के विषय में, और वह भी भारत की स्त्रियों के विषय में, निधड़क होकर, अपनी अंतरात्मा को ताक़ में रख या शायद बेचकर, ऐसे-ऐसे आक्षेप किए हैं, जिन्हें 'पाप' या 'दुष्टाचार' से कम नहीं गिना जा सकता; जिनके लिये, उस मिस को भारत की सतियों के सामने, इस लोक में या उस लोक में जवाब देना ही पड़ेगा।

उक्त झूठ से अपनी आत्मा को हलका करके मेयो ने भारत में प्रचलित परदा-प्रथा को आड़े-हाथों लिया है। भारत की ४ करोड़ स्त्रियाँ, हिंदू तथा मुसलमान, परदे में क़ैद हैं।

मेयो लिखती है कि वह एक परदा-पार्टी में मौजूद थी। उस पार्टी का बड़ा रोचक वर्णन 'मदर-इंडिया' में दिया गया है।

दिल्ली में उच्च-पदाधिकारी एक अँगरेज़ की पत्नी ने अपने घर में एक परदा-पार्टी का इंतिज़ाम किया। दिल्ली के बड़े-बड़े घरानों की स्त्रियाँ अपने-अपने बुर्क़े डाल, महार्घ्य-वस्त्रों तथा आभूषणों से मंडित हो, मकान में जुटने लगीं। क्योंकि ये स्त्रियाँ परदा करती थीं, इसलिये इनका स्वागत आँग्ल-महिला को स्वयं ड्योढ़ी पर जा-जाकर करना पड़ रहा था। किसी पुरुष को वह इस काम के लिये कैसे रख सकती थी? सबने अंदर आ-आकर अपने बुर्क़े उतार खूँटियों पर टाँग दिए। चाय की तैयारी होने लगी। वहाँ पर भी खाद्य-पदार्थ उठा-उठाकर बरताने का काम आँग्ल-महिला को ही करना पड़ रहा था; हाँ, दूसरी आँग्ल-महिलाएँ अवश्य उसे इस काम में सहायता दे रही थीं। इतने में क्या हुआ—एकदम, बाहर बरामदे में, किसी के आने की आवाज़ सुनाई दी—आदमियों की आवाज़, स्त्रियों की आवाज़ ऊँची-ऊँची सुनाई पड़ने लगी—ये आवाज़ें नज़दीक आने लगीं! आतिथ्य करनेवाली आँग्ल-महिला के मुख पर सन्नाटा-सा छा गया, कमरे के भीतर तो मानो प्रलय मच गई!! उनके

लंबे-लंबे, भारी-भारी सफ़ेद बुर्क़े पहुँच से दूर थे, इसलिये हिंदुस्तानी औरतें भागती हुई कोनों में जा छिपीं, दरवाज़े की तरफ़ पीठ करके दुबक गई। आँग्ल-महिलाएँ उनकी अवस्था समझकर, दरवाज़े पर जा खड़ी हुईं, इस प्रकार उनकी पीठ से दरवाज़े पर परदा हो गया! इसके अनंतर आँग्ल-महिला ने आकर काँपती हुई भारतीय स्त्रियों से कहा—'मुझे बड़ा खेद है, पर अब तो सब हो चुका, माफ़ करना, अब आपको डरानेवाली कोई घटना न होगी', और हमारी तरफ़ मुँह करके कहा, 'रूज़वल्ट्स मिलने के लिये आए थे, उन्हें नहीं मालूम था कि यहाँ यह सब कुछ हो रहा है' ।"

इसमें संदेह नहीं कि भारत में परदा की प्रथा बहुत फैली हुई है, उस पर कई 'प्रहसन' लिखे जा सकते हैं। यदि मिस् मेयो ने भी उक्त घटना परदे पर 'प्रहसन' के तौर पर, नाटकी ढंग से, लिखी है, तब तो हमें कुछ नहीं कहना; यदि इस घटना के उल्लेख करने का यह अभिप्राय है कि हम स्वीकार करें कि यह घटना ऐसी ही हुई होगी, तब हमें इसके सत्य होने में बहुत कुछ संदेह है। परदाधारी स्त्रियाँ अँगरेज़-स्त्रियों से ज़रा कम ही मिलती हैं, और मिलनेवाली अक्सर परदा नहीं करती ? कम-से-कम अपने घर से बाहर,

किसी दूसरे के घर में कोई पुरुष आता हो, तो वे भागती नहीं, सिर का पल्ला नीचे को खींच लेती हैं। हाँ, परदे पर यह एक अच्छा 'प्रहसन' है, और इस प्रकार के 'प्रहसनों' तथा 'चुटकुलों' की मिस मेयो की पुस्तक में कमी नहीं है, परंतु 'चुटकुलों' मे किसी देश की अवस्था का चित्र खींचनेवाला व्यक्ति स्वयं एक 'प्रहसन' और 'भारी चुटकुला' बन जाता है। मिस मेयो की ऐसे ही लोगों में आजकल गिनती हो रही है।

मिस मेयो स्वयं एक स्त्री है, इसलिये स्वाभाविक तौर से उसका ध्यान स्त्रियों की तरफ़ ज्यादा खिंचा है। हमने स्त्रियों की दुर्गति भी कम नहीं कर रक्खी। 'स्त्रीशूद्रौनाधीयाताम्' का जय-घोष करनेवालों को वह याद दिलाती है कि भारतवर्ष में १६११ में १००० में से १० स्त्रियाँ अक्षर पढ़ना जानती थीं, १६२१ में १००० में से १८ को अक्षर-बोध था और १६२५ में यह संख्या १००० में २० हो गई। यदि मिस मेयो ने सच्चे दिल से भारतीय स्त्रियों के लिये आँसू बहाए होते, तो इन संख्याओं को सुन प्रत्येक भारतवासी उसके आँसुओं के साथ अपने आँसू बहाता! हम लोगों में स्त्रियों को शिक्षा देने की प्रवृत्ति ही नहीं है। जिस लड़की का भाई विलायत तक जाकर शिक्षा-लाभ कर आया है, वह चौका-

चूल्हा करने के अतिरिक्त पुस्तक को हाथ लगाना तक नहीं जानती। इसमें संदेह नहीं कि अब धीरे-धीरे स्त्रियों की तरफ़ भी पुरुष-समाज का ध्यान जा रहा है; परंतु अभी यह चाल बहुत धीमी है। मिस मेयो ने १०वें अध्याय में भारतीय स्त्रियों के अशिक्षित होने का ही रोना रोया है। क्या मैं भारत के शिक्षित पुरुष-समाज से पूछ सकती हूँ कि वह 'स्त्री-शिक्षा' के अभाव पर किए गए मिस मेयो के आक्षेपों का उत्तर देने की क्या तैयारी कर रहा है? उन्हें मालूम होना चाहिए कि इसका जवाब अख़बारों के कालम रँग देने और मिस मेयो को कोसने से नहीं दिया जा सकता। आज ये प्रश्न मिस मेयो के मुख से सुनाई देते हैं; कल इन्हीं प्रश्नों को भारत का मुट्ठी-भर 'शिक्षित स्त्री-समाज' पुरुष-समाज से करनेवाला है। इन प्रश्नों को टाला नहीं जा सकता; इनका उत्तर देना होगा। आज हो या कल हो, स्त्रियों के लिये शिक्षा का द्वार खोलकर ही इन प्रश्नों का उत्तर देना होगा।

तृतीय भाग

'मदर-इंडिया' के तीसरे भाग में 'ब्राह्मण' का प्रवेश कराया गया है और उसका चित्र एक 'नान-ब्राह्मण' से खिंचवाया गया है। मिस मेयो के कथनानुसार उसके सम्मुख एक 'नान-ब्राह्मण' ने 'ब्राह्मण' का चित्र इस प्रकार खींचा—

"प्राचीन काल में जब कि सब लोग अपनी मर्जी का जीवन व्यतीत करते थे, ब्राह्मण ही ऐसा था, जो पढ़ने-लिखने का काम करता था। वह चतुर भी बड़ा था। अपनी विद्या का लाभ उठाकर उसने चोरी से धर्म-शास्त्रों को खोलकर उनमें अपनी तरफ़ से लिख डाला कि ब्राह्मण ही सबसे श्रेष्ठ होता है। इस घटना को हुए युग बीत गए! धीरे-धीरे, क्योंकि ब्राह्मण ही पढ़ सकता था और झूठ-मूठ धर्म-शास्त्रों का नाम लेकर दूसरों को पढ़ने से रोकता था, लोग भी उसे पृथ्वी का परमेश्वर समझकर पूजने लगे, उसकी आज्ञा मानने लगे, उसने अपना नाम भी 'भू-देव' (Earthly God) रख लिया। अब वह संपूर्ण हिंदुस्तान में प्रत्येक व्यक्ति की आत्मा पर शासन करने लगा, और जब तक इँगलैंड, सब जाति के बच्चों के लिये स्कूल लेकर, यहाँ नहीं आ गया, तब

तक ब्राह्मण के विरुद्ध आवाज़ उठाने की किसी को हिम्मत भी न पड़ी।

"भारतवर्ष में प्रत्येक हिंदू ब्राह्मण-देवता को सरकार की अपेक्षा कई-गुना ज्यादा टैक्स देता है। जन्म के दिन से लेकर मरण के दिन तक ब्राह्मण-देवता का पेट भरते रहना प्रत्येक हिंदू का कर्तव्य है। जब बच्चा पैदा हो, तो ब्राह्मण को 'कर' देना चाहिए, नहीं तो बच्चा 'फले-फूलेगा नहीं'। सूतक समाप्त होने पर ब्राह्मण को 'कर' देना चाहिए। कुछ दिनों बाद नाम-करण-संस्कार होता है; और ब्राह्मण को 'कर' देना चाहिए। तीसरे महीने मुंडन-संस्कार आता है; और फिर ब्राह्मण को 'कर' देना चाहिए। छठे महीने अन्नप्राशन-संस्कार करो; और फिर ब्राह्मण को 'कर' देना चाहिए। जब बच्चा पाँवों से चलने योग्य हो जाय, फिर ब्राह्मण को 'कर' देना चाहिए। साल समाप्त होने पर 'जन्म-दिवस' मनाया जाता है, फिर ब्राह्मण को 'कर' देना चाहिए। सातवें साल में उपनयन संस्कार किया जाता है या लड़का विद्याभ्यास करता है, फिर ब्राह्मण को 'कर' देना चाहिए। संमृद्ध घरानों में विद्याभ्यास प्रारंभ करने के लिये सोने की क़लम बनवाकर ब्राह्मण बच्चे के हाथ से दो-एक अक्षर लिखवाता है, और सोने की क़लम ब्राह्मण-देवता की भेंट चढ़ा देनी चाहिए।

"जब लड़की एक साल की हो जाती है, या कभी-कभी सात या नौ वर्ष की होती है, इसी प्रकार जब लड़का डेढ़ या दो वर्ष का होता है या १६ वर्ष के नीचे होता है, तब किसी समय 'सगाई' की जाती है, और फिर ब्राह्मण को भारी 'कर' दिया जाना चाहिए। फिर शादी पर ब्राह्मण की झोली भरनी चाहिए। ग्रहण पर ब्राह्मण को दक्षिणा देनी चाहिए—बस, यह 'कर' का या दक्षिणा का सिलसिला मृत्यु तक चलता ही चला जाता है।

"ब्राह्मण कहता है कि ये सब संस्कार कराना और इसी प्रकार की अन्य बहुत-सी बातें उसका 'जन्मसिद्ध अधिकार' है, जो कि शास्त्रों ने उसे दिया है, जो इन सबको नहीं करता, वह रौरव नरक में जाता है। प्रत्येक संस्कार के समय हमें ब्राह्मण-देवता के पाँव धोकर उसका अर्घ्य अंजलि से पान करना पड़ता है। ब्राह्मण एक निकम्मा, आलसी जीव है, जो किसी काम के लिये हाथ-पैर नहीं हिलाता। मदरास-प्रांत में ही १५ लाख ब्राह्मण हैं, जिनका पेट ४ करोड़ १० लाख नान-ब्राह्मण प्रतिदिन भरते हैं।

"बस, यही कारण है कि जब तक हम लोग भी अपने में दम नहीं भर लेते, तब तक हमारे लिये समुद्र-पार का दूर का राजा ही ठीक है, जो कि हमें शांति तथा न्याय दे रहा है।

हमारे पैसे का कुछ बदला भी चुकाता है, और हमें उठने का मौक़ा देता है। उस एक दूर बैठे राजा के स्थान पर हमें १५ लाख, हर समय हमारे सिर पर खड़े हुए मालिकों की, जो हमारा ही दिया हुआ खाकर हमें छूने तक से परे भागते और कहते हैं कि हमारे स्पर्श से वे अपवित्र हो जायँगे, ज़रूरत नहीं है।"

'नान-ब्राह्मण' के कहे हुए इन शब्दों में एक चीख़ है, एक पुकार है, जिसकी हृदय को चीर देनेवाली टक्कर को वही अनुभव कर सकता है, जो मदरास-प्रांत में जाकर 'ब्राह्मण' तथा 'नान-ब्राह्मणों' के पारस्परिक वैमनस्य को अपनी आँखों से देख आया है। मैं मदरास के 'ब्राह्मणों' से पूछना चाहती हूँ कि क्या वे अपने व्यवहार द्वारा मिस मेयो के इस कथन का क्रियात्मक उत्तर देने के लिये कटिबद्ध होंगे?

तृतीय भाग में मिस मेयो ब्राह्मण-देवता पर इस प्रकार अपने हृदय के फूल चढ़ाकर क्रमबद्ध अध्यायों के सिलसिले में ११वें अध्याय का प्रारंभ करती है, जिसका शीर्षक है—'Less than Men'—'मनुष्य से भी तुच्छ'! अध्याय का प्रारंभ इन वाक्यों से होता है—

"Surely, if there be a mystery in India it lies here—it lies in the Indian's inability any-

where, under any circumstances, to accuse any man, any society, any nation, of 'race prejudice', so long as he can be reminded of the existence in India of 60,000,000 fellow Indians to whom he violently denies the common rights of man."

"निस्संदेह, भारतवर्ष में यदि कोई रहस्य है, तो यह है—रहस्य यह है कि कोई भारतीय भी, कहीं भी, किसी अवस्थाओं में भी किसी व्यक्ति को, किसी समाज को, किसी जाति को तब तक 'जाति-विद्वेष का लांछन नहीं लगा सकता, जब तक उसे याद दिलाया जा सकता है कि वह स्वयं अपने देश में अपने ही छः करोड़ भाइयों को मनुष्यता के अधिकारों से भी जबरदस्ती वंचित किए हुए है।"

भारतीय भाइयो ! ये शब्द कितने उबलते हुए हैं, परंतु कितने सच्चे हैं ! क्या हम इनकार कर सकते हैं कि हमने अपने भाइयों के ही हाथों से मनुष्यता के जन्मसिद्ध अधिकारों को भी छीन रक्खा है ? यदि उपनिवेशों में हमें दूसरी जाति के लोग अछूत गिनते हैं, और अपने ही देश में हम अछूत गिने जाते हैं, तो क्या कहीं यह 'ईश्वरीय न्याय' ही तो नहीं हो रहा ? हाँ, मिस मेयो ने उन लोगों के साथ भारी अन्याय

किया है, जो जीवन के सब प्रलोभनों को तिलांजलि देकर मनुष्य-जाति के अधिकारों की रक्षा के यज्ञ में अपने प्राणों को आहुति की तरह उठा-उठाकर फेंक रहे हैं। इस समय चारों तरफ़ अधिकारों की पुकार मच रही है, हिंदू लोग जाग रहे हैं, और पिछली सदियों में किए हुए पापों का प्रायश्चित्त कर रहे हैं। आँखोंवाले देख रहे हैं कि देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक जागृति की लहर ज़ोर से थपेड़े मारकर चट्टानों को भी हिला रही है। अछूत लोग जाग रहे हैं, परंतु उन्हें जगाने के लिये कितनों ने ही गले में झोली डाल ली है। मिस मेयो की आँखें इन लहरों को भी देख जातीं, तो शायद 'मदर-इंडिया' को पढ़कर भारतवासियों को इतना असंतोष न होता!

मिस मेयो भागवत-पुराण का उद्धरण देती हैं—"जो ब्राह्मण की हत्या करेगा, वह विष्ठा खानेवाला कृमि बनेगा। अनेक जन्मों में पशु-योनि से गुज़रकर वह अछूत-जाति में उत्पन्न होगा और गौ के शरीर पर जितने बाल होते हैं, उससे चौगुनी बार अंधा बनेगा। हाँ, ४० हज़ार ब्राह्मणों को भोजन देकर वह इस पाप से छूट सकता है। यदि ब्राह्मण किसी शूद्र को मार डाले, तो १०० बार गायत्री का पाठ करने से पाप दूर हो जाता है।"

उक्त वाक्य किसी भोजन-भट्ट ब्राह्मण के पुराण में लिखा

हुआ प्रतीत होता है। भारत के मध्यकालीन इतिहास में इस प्रकार की अनेक बातें पाई जाती हैं, परंतु इन घटनाओं का उल्लेख करके वर्तमान भारत को चित्रित करना उतना ही हास्यास्पद है, जितना 'रिफ़ार्मेशन' से पहले 'पोप' के अत्याचारों, दुराचारों, अन्यायों तथा लोभों का वर्णन कर वर्तमान योरप का चित्र खींचना। इस समय यदि कोई ब्राह्मण शूद्र की हत्या कर १०० बार गायत्री के पाठ से छूटना चाहे, तो भ्रम में रहेगा। इसमें भी बड़ा संदेह है कि पुराण में लिखे रहने से ये बातें कहीं क्रिया में भी आती थीं या नहीं। ऐसे संदिग्ध आधार को युक्ति के रूप से पेश करना भारी भूल है।

मिस मेयो लिखती है—"भारत में ऐसे भिखमंगे मौजूद हैं, जो भीख में फेंके हुए पैसे को तब तक हाथ नहीं लगा सकते, जब तक देनेवाला उनकी आँखों से ओझल न हो जाय। उनके आँख की पहुँच में रहने से पैसे को हाथ लगा दिया जाय, तो वे अपवित्र हो जाते हैं। यदि इस जाति का कोई व्यक्ति आम सड़क के समीप आना चाहे, तो उसे देख लेना होता है कि कोई ब्राह्मण उसके इर्द-गिर्द २०० गज की दूरी तक न हो। यदि इतने में कोई ब्राह्मण आ जाय, तो वह उस 'अछूत' को देखकर ठहर जाता है, और ज़ोर से चिल्लाता है। वह अछूत उसी सड़क पर ब्राह्मण को देखकर एकदम भाग खड़ा होता

है, और जब 'अपवित्रता की दूरी' (Pollution distance) तक निकल जाता है, तो आवाज़ देता है—'मैं २०० गज़ दूर आ गया हूँ, आप मेहरबानी कर गुज़र जाइए।' डुबिओस-नामक एक लेखक ने 'Hindu Manners Customs and Ceremonies' पुस्तक में लिखा है कि उसकी यात्रा के दिनों में यदि किसी नायर को परिया रास्ते में मिल जाता था, तो उसे परिया की छाती में बर्छा मारकर इस अपराध के दंड देने का अधिकार था।" मिस मेयो का कथन है कि समाज से इस प्रकार घृणित व्यवहार के पाकर इन लोगों ने जो ४५ लाख के लगभग हैं, चोरी-डकैती आदि का व्यवसाय प्रारंभ कर दिया, और अब ये लोग मनुष्य-गणना में 'क्रिमिनल ट्राइब्स' के नाम से लिखे जाते हैं।

१२वें अध्याय का शीर्षक है—'Behold a Light.' मि० मांटेगु को मदरास के अछूतों की तरफ़ से, जो अभिनंदन-पत्र दिया गया था, उसमें से मिस मेयो ने निम्न उद्धरण दिए हैं—

"Madras Presidency Outcastes' Association deprecates political change and desires only to be saved from the Brahman, whose motive in seeking greater share in the Government is

that of the cobra seeking the charge of a young frog."

"मदरास-प्रांत के अछूतों की यह सभा भारत में राजनैतिक परिवर्तन को नहीं चाहती और ब्राह्मणों से अपनी रक्षा की इच्छुक है, क्योंकि शासन के कार्य में ब्राह्मणों का बड़ा भाग लेने की इच्छा करना वैसा ही है, जैसा फनियर साँप का मेंढक की रखवाली करने की इच्छा प्रकट करना।"

एक दूसरे अभिनंदन में लिखा गया था—"We need not say that we are strongly opposed to Home Rule. We shall fight to the last drop of our blood any attempt to transfer the seat of authority in this country from British hands to so-called High caste Hindus who have ill-treated us in the past and would do so again but for the protection of the British law. Even as it is, our claims, nay our very existence is ignored by the Hindus; and how will they promote our interests if the administration passes into their hands."

"हमें यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि हम स्वराज्य के अत्यंत विरुद्ध हैं। जब तक हमारी देह में रुधिर का एक

भी बिंदु है, हम उच्च जाति के हिंदुओं के हाथों में राज-शक्ति जाने के प्रत्येक प्रयत्न के विरुद्ध लड़ेंगे। उन्होंने भूत में हमसे बुरा व्यवहार किया है, और यदि ब्रिटिश क़ानून न रहे, तो फिर हमसे वे वैसा ही व्यवहार करेंगे। अब भी वे हमारे किसी अधिकार को स्वीकार नहीं करते; हिंदू लोग हमारी 'सत्ता' को ही मानने के लिये तैयार नहीं। यदि शासन का नियम उनके हाथ चला गया, तो वे हमारे स्वार्थों की रक्षा कैसे करेंगे?"

हमारा तो दृढ़ विश्वास है कि स्वराज्य प्राप्त करने से पहले हमें अछूतों की इस विकट समस्या को अवश्य हल करना होगा। अपने अन्यायों को स्वीकार कर उन्हें दूर करने के लिये प्रयत्नशील होना होगा। ६ करोड़ अछूतों को अपनी देह से फाटकर भारतवर्ष भारतवर्ष नहीं रह सकता।

इसी स्थल पर मिस मेयो ने 'प्रिंस ऑफ़ वेल्स' के स्वागत का वर्णन किया है—"बंबई में प्रिंस का आशातीत स्वागत हुआ। प्रिंस की मोटर धीरे-धीरे सरक रही थी। पुलिस ने मोटर का घेरा बनाने का प्रयत्न किया, परंतु सब व्यर्थ हुआ। लोग मोटर की तरफ़ बढ़े चले आए, उसके किनारों को हाथों से पकड़ लिया, और ज़ोर-ज़ोर से राजकुमार के जय-घोषों से आसमान को फाड़ने लगे। इसी हालत में मोटर बंबई के

स्टेशन पर पहुँची। प्रिंस स्टेशन पर चले गए, लोग अभी बाहर खड़े थे; बड़ी कठिनता से उन्हें रोका गया था। गाड़ी के छूटने में ३ मिनट बाक़ी थे कि प्रिंस ने फाटक खोलने का निर्देश दिया, ताकि जनता उनके दर्शनों के लिये अंदर आ जाय। बाढ़ में उमड़ रही नदी के प्रवाह की तरह अनंत जन-समुदाय बह पड़ा। वे हँसते थे, कूदते थे, जय-घोष करते थे और हर्ष के आँसू बहाते थे; जब गाड़ी चली तो वे गाड़ी के साथ-साथ भागने लगे, और जब तक गाड़ी उनकी पहुँच से बिलकुल दूर नहीं निकल गई, तब तक वे अपने घरों को नहीं लौटे।"

मिस मेयो के इस 'स्वतःप्रकाशमान झूठ' पर क्या टीका-टिप्पणी की जाय ? जिन दिनों प्रिंस का भारत में पदार्पण हुआ, उन दिनों असहयोग का आंदोलन ज़ोरों पर था। प्रिंस जहाँ-जहाँ पहुँचे, वहाँ-वहाँ हड़तालें हुईं, बाज़ार ख़ाली दिखाई दिए, सरकार के नाकोंदम हो गया। गावों से, बग़ैर टिकट के, और पल्ले में रोटी देकर, ग्रामीण लोगों को शहरों में लाया गया, जो बड़ी-बड़ी 'महात्मा गांधी की जय' के नारों से प्रिंस का स्वागत करते रहे। यदि इस सबको 'प्रिंस का स्वागत' कहा जा सकता है, तो यह भी बेधड़क होकर कहा जा सकता है कि मिस मेयो ने झूठ बोलने के लिये ही क़लम

उठाई है। 'मदर-इंडिया' का भारतवर्ष, अनेक अंशों में, मेयो के दिमाग़ का भारतवर्ष है, वास्तविक भारतवर्ष नहीं।

'मदर-इंडिया' का १३वाँ अध्याय भारत में प्रचलित शिक्षा और उसके दुष्परिणामों पर लिखा गया है, इसका शीर्षक है—'Give Me Office, or Give Me Death'—'मुझे नौकरी दो, या मौत दो!' इस अध्याय में कई मजेदार चुटकले दिए गए हैं—

एक नवयुवक ने कहा—"मैं बी० ए० हूँ, मुझे डिग्री लिए दो साल हो गए। परंतु अभी तक मुझे कोई ठीक नौकरी नहीं मिली। मेरा भाई मुझे खाने को दे रहा है। वह बी० ए० नहीं है, इसलिये मुझे अपनी स्थिति के लिये जितने वेतन की जरूरत है, उससे तिहाई में उसे संतोष हो जाता है।"

फिर लिखा है—"A man may and does write after his name 'B. A. Plucked' and 'B. A. Failed' without exciting the mirth of his public. The terms are actually used in common parlance as if in themselves a title like M. A. or Ph. D. As, see the 15th Report of the Society for the Improvement of the Backward Classes, Bengal and Assam (1925) P. 12: 'The

school...is now under an enthusiastic B. A. plucked teacher'."

"लोग अपने नाम के साथ 'बी० ए० प्लक्ड' या 'बी० ए० फ़ेल' लिखते हैं और उन पर कोई हँसता नहीं! इन शब्दों का बोल-चाल की भाषा में ऐसे ही प्रयोग किया जाता है, मानों ये भी एम्० ए० और पी० एच्० डी० की तरह डिग्रियाँ हों! १६२५ में प्रकाशित, बंगाल तथा आसाम के अछूतों के उद्धार की सोसाइटी की १५वीं रिपोर्ट के १२ पृष्ठ पर लिखा है—इस समय स्कूल एक उत्साही बी० ए० फ़ेल अध्यापक की देख-रेख में है।"

एक अमेरिकन ने किसी भारतीय युवक से पूछा—"जहाँ तुम लोगों की ज़रूरत नहीं, वहाँ क्यों घुसे आते हो? फिर जब तुम्हें कहा जाता है कि कोई नौकरी खाली नहीं. तो बुरा मानने लगते हो। यह कैसे संभव है कि तुम सबको सरकारी दफ्तरों में क्लर्की मिल जाय? तुम अपने गाँव के घर में क्यों नहीं जा बैठते। वहाँ एक स्कूल खोल दो, खेती करो, गाँव के स्वास्थ्य का सुधार करो, तुमने विद्याध्ययन करके जो कुछ सीखा है, उसका अपने ग्रामीण भाइयों को भी लाभ पहुँचाओ। क्या वहाँ थोड़ा-सा काम करके तुम्हें भर-पेट खाने को नहीं मिल सकता, जो मारे-मारे फिरते हो?"

उस युवक ने उत्तर दिया—"ठीक है, परंतु तुम यह भूल जाते हो कि यह सब काम मेरी शान के ख़िलाफ़ है। मैं तो बी० ए० हूँ! यदि तुम मुझे नौकरी नहीं दोगे, तो मैं आत्म-घात कर लूँगा।" और, सचमुच, नौकरी न मिलने पर उस युवक ने आत्मघात कर लिया है।

मिस मेयो ने ये दृष्टांत देकर मानो भारतीय नवयुवकों को चिढ़ाया है—'अरे! तुम स्वराज्य चाहते हो!' परंतु मिस मेयो को मालूम होना चाहिए था कि यह दोष भारतीय युवकों का नहीं, परंतु भारत के वर्तमान शासकों का है। जिस अस्वाभाविक शिक्षा-प्रणाली को उन्होंने यहाँ प्रचलित किया है, उसका नतीजा उक्त घटनाओं के अतिरिक्त कुछ हो नहीं सकता। वर्तमान शिक्षा की भारत में नींव डालनेवाले लॉर्ड मैकाले ने २ फ़र्वरी १८३५ में अपनी 'शिक्षा-समति' की जो रिपोर्ट लिखी थी, उसमें स्पष्ट शब्दों में उद्घोषित कर दिया गया था—"We must at present do our best to form a class who may be interpreters between us and the millions whom we govern, a class of persons Indians in blood and colour, but English in taste, in opinions, in morals and in intellects." अर्थात् "हमें इस समय ऐसे लोग पैदा करने की भरसक कोशिश करनी चाहिए, जो हममें और उन लाखों अशिक्षित

school...is now under an enthusiastic B. A. plucked teacher'."

"लोग अपने नाम के साथ 'बी० ए० प्लक्ड' या 'बी० ए० फ़ेल' लिखते हैं और उन पर कोई हँसता नहीं ! इन शब्दों का बोल-चाल की भाषा में ऐसे ही प्रयोग किया जाता है, मानों ये भी एम्० ए० और पी० एच्० डी० की तरह डिग्रियाँ हों ! १६२५ में प्रकाशित, बंगाल तथा आसाम के अछूतों के उद्धार की सोसाइटी की १५वीं रिपोर्ट के १२ पृष्ठ पर लिखा है—इस समय स्कूल एक उत्साही बी० ए० फ़ेल अध्यापक की देख-रेख में है।"

एक अमेरिकन ने किसी भारतीय युवक से पूछा—"जहाँ तुम लोगों की ज़रूरत नहीं, वहाँ क्यों घुसे आते हो ? फिर जब तुम्हें कहा जाता है कि कोई नौकरी ख़ाली नहीं. तो बुरा मानने लगते हो। यह कैसे संभव है कि तुम सबको सरकारी दफ़्तरों में क्लर्की मिल जाय ? तुम अपने गाँव के घर में क्यों नहीं जा बैठते। वहाँ एक स्कूल खोल दो, खेती करो, गाँव के स्वास्थ्य का सुधार करो, तुमने विद्याध्ययन करके जो कुछ सीखा है, उसका अपने ग्रामीण भाइयों को भी लाभ पहुँचाओ। क्या वहाँ थोड़ा-सा काम करके तुम्हें भर-पेट खाने को नहीं मिल सकता, जो मारे-मारे फिरते हो ?"

उस युवक ने उत्तर दिया—"ठीक है, परंतु तुम यह भूल जाते हो कि यह सब काम मेरी शान के खिलाफ है। मैं तो बी० ए० हूँ! यदि तुम मुझे नौकरी नहीं दोगे, तो मैं आत्म-घात कर लूँगा।" और, सचमुच, नौकरी न मिलने पर उस युवक ने आत्मघात कर लिया है।

मिस मेयो ने ये दृष्टांत देकर मानो भारतीय नवयुवकों को चिढ़ाया है—'अरे! तुम स्वराज्य चाहते हो!' परंतु मिस मेयो को मालूम होना चाहिए था कि यह दोष भारतीय युवकों का नहीं, परंतु भारत के वर्तमान शासकों का है। जिस अस्वाभाविक शिक्षा-प्रणाली को उन्होंने यहाँ प्रचलित किया है, उसका नतीजा उक्त घटनाओं के अतिरिक्त कुछ हो नहीं सकता। वर्तमान शिक्षा की भारत में नींव डालनेवाले लॉर्ड मैकाले ने २ फर्वरी १८३५ में अपनी 'शिक्षा-समति' की जो रिपोर्ट लिखी थी, उसमें स्पष्ट शब्दों में उद्घोषित कर दिया गया था—"We must at present do our best to form a class who may be interpreters between us and the millions whom we govern, a class of persons Indians in blood and colour, but English in taste, in opinions, in morals and in intellects." अर्थात् "हमें इस समय ऐसे लोग पैदा करने की भरसक कोशिश करनी चाहिए, जो हममें और उन लाखों अशिक्षित

भारतीयों में, जिन पर हमको शासन करना है, माध्यम का काम कर सकें, जो चमड़ी से हिंदुस्थानी, परंतु बाक़ी सब बातों से अँगरेज़ हों।"

ऐसे ही लोगों को उत्पन्न करने के लिये भारत के विश्वविद्यालय खोले गए। फिर अब, जब कि ऐसे लोग संख्या से अधिक उत्पन्न हो गए, तो उनको आकर चिढ़ाना कमीनापन है! मिस मेयो की क़लम की हम दाद देते, यदि वह इन अवस्थाओं को देखकर ब्रिटिश गवर्नमेंट पर खीझ उठती, और उनके द्वारा स्वार्थ-साधन के लिये प्रचलित किए गए अस्वाभाविक शिक्षा-क्रम के विरुद्ध उबल पड़ती। इसके प्रतिकूल देखिए, वह क्या लिखती है—

'Government', they repeat, 'sustains the University, Government is responsible for its existence. What does it mean by accepting our fees for educating us and then not giving us the only thing we want education for! Cursed be the Government! Come, let us drive it out and make places for ourselves and our friends.'

"नौकरी से हताश हुए युवक कहते हैं, सरकार विश्वविद्यालय चलाती है, सरकार ही उनकी ज़िम्मेदार है। इसका

क्या मतलब है कि सरकार हमसे फ़ीस लेकर हमें शिक्षित तो कर देती है, परंतु जिन नौकरियों के लिये हम शिक्षा ग्रहण करते हैं, उनसे हमें वंचित रखती है ? सरकार पर हमारा शाप पड़े ; आओ, सरकार को निकाल डालें और अपने तथा अपने मित्रों के लिये नौकरियाँ निकाल लें !"

मिस मेयो के विचार में स्वराज्य का आंदोलन इन्हीं नौकरियों को ढूँढनेवाले नौजवानों का उठाया हुआ है ! न-जाने मिस मेयो किस भूल में है ! स्वराज्य का आंदोलन तो उन नवयुवकों के कंधों पर चल रहा है, जो नौकरी को कुत्ते की जूठ समझकर ठुकरा देते हैं । स्वराज्य का आंदोलन 'नौकरियों की माँग' नहीं, 'अधिकारों की लड़ाई' है । जो दिन इस युद्ध का विजय-दिवस होगा, उस दिन यदि मिस मेयो जीती रही, तो उसे पता लग जायगा कि इस युद्ध में लड़नेवाले सिपाही किस धातु के बने हुए थे ।

१५वें अध्याय का विषय है, 'शिक्षा के अभाव का कारण ।' इस भाव के लिये शीर्षक रक्खा गया है, "Why is Light Denied?"—"प्रकाश क्यों रोका जा रहा है ?" अक्सर कहा जाता है कि सरकार शिक्षा पर ध्यान नहीं दे रही, इसलिये भारत में शिक्षितों की संख्या बहुत कम है । मिस मेयो कहती है, यह ब्रिटिश-सरकार का दोष नहीं, तुम्हारा

अपना दोष है। सुनिए, मिस मेयो की अँगरेज़ी सरकार की तरफ़ से वकालत—

"स्त्रियों को तथा अछूतों को तो भारतवासी स्वयं शिक्षित नहीं होने देते, क्योंकि उनके शास्त्रों की यही आज्ञा है! ब्रिटिश भारत में अशिक्षित स्त्रियों की संख्या १२,१०,००,००० तथा अशिक्षित अछूत पुरुषों की संख्या २,८५,००,००० है। इस प्रकार कुल १४,९५,००,००० को तो भारतीयों ने शास्त्रों के क़ानूनों से शिक्षा से वंचित कर रक्खा है। भारत की कुल जन-संख्या ३१,९०,००,००० है, परंतु इनमें से २४,७०,००,००० ही ब्रिटिश भारत में रहते हैं, बाक़ी के लोग रियासतों के रहनेवाले हैं। अर्थात् साढ़े २४ करोड़ में से १५ करोड़ के लगभग स्त्री-पुरुषों को भारतवासी स्वयं पढ़ने-लिखने नहीं देना चाहते, अंधकार में रखना चाहते हैं। यह संख्या ६०.५३ प्रति शतक पड़ती है। बाक़ी रहे ३९.४७ इनको अशिक्षित रखने की भी ज्यादातर ज़िम्मेदारी भारतीयों की ही है। भारतवर्ष में ९० प्रति शतक लोग गाँवों में रहते हैं; भारत में ५ लाख गाँव हैं, जो १०,९४,३०० (दस लाख) वर्गमील देश में बसे हुए हैं। गाँवों में पढ़ाने के लिये कितने शिक्षक चाहिए! परंतु जब हिंदू-शिक्षकों को गाँवों में जाने के लिये कहा जाता है, तो वे

तैयार नहीं होते। वे चाहते हैं, उन्हें शहर में नौकरी मिले।"

इसमें संदेह नहीं कि मिस मेयो ने अँगरेजी सरकार की जो वकालत की है, वह प्रशंसनीय है; परंतु यह कहना भूठ है कि इस समय भी स्त्रियों तथा अछूतों के पढ़ने में 'स्त्री-शूद्रौ नाधीयाताम्' का क़ानून जारी है। भारत के इतिहास के वे काले पन्ने सदा शर्म से खोले जायँगे, परंतु भारत का इतिहास उतने में ही समाप्त नहीं हो जाता। प्रश्न यह है कि इस समय, जब कि सब तरह से जनता सामाजिक सुधारों के लिये तैयार है, उसे सरकार से क्या सहायता मिल रही है? इस समय भारत में प्रति व्यक्ति कुल चार आना प्रति-वर्ष शिक्षा पर खर्च होता है! अमेरिका के प्रसिद्ध समाज शास्त्रज्ञ ऑलस्वर्थ रॉस महोदय लिखते हैं कि अमेरिका ने २५ वर्ष फ़िलिपाइंस में शासन किया और इतने अरसे में वहाँ की जनता का दसवाँ हिस्सा स्कूलों में जाता है, जब कि भारत में अँगरेजों के इतने समय के शासन के बाद भी जनता के कुल तीसवें हिस्से को स्कूलों की हवा लगी है। अँगरेज लेखकों ने ही स्वयं लिखा है कि उनके आने से पूर्व भारत के प्रत्येक गाँव में एक स्कूल था। इस समय ब्रिटिश भारत में ५लाख ८८ शहर और गाँव हैं, उनमें केवल२,१६,१३१

शिक्षा की संस्थाएँ हैं, जिनमें से १,६८,०१३ प्रारंभिक शिक्षणालय हैं। अँगरेज़ों के आने के बाद प्रारंभिक शिक्षा में कमी ही हुई है। उनसे पहले देश की शिक्षा की अवस्था अब से बहुत अच्छी थी। जापान ने तो हमारे देखते-देखते शिक्षा में उन्नति की है। १६१८ में वहाँ केवल ४ विश्वविद्यालय थे, परंतु १६२३ में ३१ हो गए ; १६१८ में विश्वविद्यालयों में पढ़ रहे विद्यार्थियों की संख्या ६०४३ थी, १६२२ में २६२०८ हो गई। मिस मेयो को मालूम होना चाहिए था कि बिना सरकार की सहायता के केवल आर्य-समाज की तरफ़ से, जो अधिकतः पंजाब तथा युक्त-प्रांतों में ही काम कर रही है, २६२ कन्या-पाठशालाएँ चल रही हैं और उनकी माँग बढ़ती जा रही है। यदि सरकार का शिक्षा की तरफ़ ध्यान हो, तो हमें कोई कारण नहीं प्रतीत होता कि देश में शिक्षा की वृद्धि क्यों न हो ?

मिस मेयो का कथन है कि स्त्री-अध्यापकाएँ नहीं मिलतीं, क्योंकि—

"On account of social obstacles and dangers, it is practically impossible for women to teach in villages, unless they are accompanied by husbands."

"सामाजिक बाधाओं तथा डर के कारण कोई स्त्री गाँव में नहीं पढ़ा सकती, जब तक उसका पति उसके साथ न हो।"

इसी प्रकार एक अमेरिकन स्त्री ने मिस मेयो से कहा—"No Indian girl can go alone to teach in rural districts. If she does, she is ruined. It is disheartening to know that not one of the young women that you see running about this compass, between classroom and classroom, can be used on the great job of educating India. Not one will go out into the villages to answer the abysmal need of the country. Not one dare risk what awaits her there, for it is no risk, but a certainty. And yet these people cry out to be given self-government."

"'कोई भी भारतीय लड़की, अकेली, देहातों में पढ़ाने नहीं जा सकती। यदि वह जाय तो उसका सर्वनाश हो जाता है। यह जानकर कितनी निराशा होती है कि इस स्कूल में इस समय जो लड़कियाँ सामने खेलती दिखलाई दे रही हैं, इनमें से एक को भी भारतीय शिक्षा के महान् कार्य पर नहीं लगाया जा सकता। इनमें से एक भी देश की इस गहरी

आवश्यकता को पूर्ण करने के लिये गाँवों में नहीं जायगी। यह बड़ा भारी ख़तरा है जिसे उठाने का किसी को साहस नहीं होता। अकेले जाने में ख़तरा ही नहीं, परंतु निश्चय है। और, फिर भी ये लोग स्वराज्य-स्वराज्य चिल्लाते रहते हैं।"

मिस मेयो लिखती है—"१९२२ में ब्रिटिश-भारत की १२,३५,००,००० स्त्रियों में से कुल ४,३६१ स्त्रियाँ अध्यापिका बनने की तैयारी कर रही थीं, जिनमें से २०५०—आधे के लगभग—ईसाई थीं, यद्यपि ईसाइयों की संख्या का भारत की कुल जनता से अनुपात १.५ प्रतिशतक का है!"

इन वाक्यों से स्पष्ट है कि मिस मेयो को मालूम है कि हिंदुओं में ऐसी स्त्रियों की इतनी संख्या ही उत्पन्न नहीं हुई, जिनके सामने देहातों की शिक्षा का प्रश्न रक्खा जा सके। फिर भी उसने जान-बूझकर इस प्रश्न को इस प्रकार रखने का प्रयत्न किया है, जिससे भारतवर्ष को संसार के सम्मुख बदनाम किया जा सके! मालूम पड़ता है कि स्कूल की उक्त बातचीत मिस मेयो ने अपनी तरफ़ से बनाकर लिखी है। लाहौर के 'विक्टोरिया गर्ल्स स्कूल' की, मिस बोस के नाम से 'मदर-इंडिया' में कुछ बातें लिखी गई हैं, जिनके संबंध में एक संवाददाता से मिस बोस ने

कहा—'A great many of the things printed in inverted commas were never spoken'—'बहुत-सी बातें जिन्हें उद्धरण के रूप से मिस मेयो ने लिखा है, मैंने कही तक नहीं !' ऐसी अवस्था में अध्यापिकाओं के न मिलने का कारण मिस मेयो ने अपनी सूझ से गढ़ लिया हो, तो आश्चर्य नहीं, खासकर जब कि यह सब कुछ लिखकर वह भारतीयों को फटकारना चाहती हो—"और फिर भी ये लोग स्वराज्य-स्वराज्य चिल्लाते रहते हैं !"

'विक्टोरिया-गर्ल्स-स्कूल' की प्रिंसिपल मिस बोस की बातचीत का उद्धरण देते हुए मिस मेयो एक स्थल पर लिखती हैं कि मिस बोस ने उनसे कहा—"हम शिक्षा के लिये नाम-मात्र का शुल्क लेते हैं। हिंदुस्थानी लड़कियों की शिक्षा के लिये खर्च करना नहीं चाहते। यह स्कूल भी सरकारी मदद से चल रहा है, और बहुत-सा चंदा इँगलैंड से आता है।"

इस बातचीत के संबंध में दीवान बहादुर के० बी० थापर लाला लाजपतराय को एक पत्र में लिखते हैं—

"मैं १८८७ से १९१४ तक इस स्कूल का सेक्रेटरी रहा हूँ। इस अरसे में स्कूल ने एक पाई भी योरप या इँगलैंड

से नहीं लिया। सरकारी सहायता तथा राजे-महाराजाओं के चंदों से ही यह स्कूल चलता रहा है।"

यह है मिस मेयो का सफ़ेद झूठ !

अँगरेज़ी-शासन की प्रशंसा के गीत गाती हुई तो मिस मेयो थकती ही नहीं। देखिए, वह एकदम क्या बोल उठती है—"But it is only to the Briton that the Indian villager of today can look for steady, sympathetic and practical interest and steady and reliable help in his multitudinous necessities. It is the British Deputy-District Commissioner, none other, who is his father and his mother, and upon the mind of that Deputy-District Commissioner the villagers' troubles and the villagers' interests sit day and night."

"भारत के देहाती लोग तो अँगरेज़ों की तरफ़ ही आँख उठाकर सहानुभूति तथा सहायता के लिये देखते हैं, अँगरेज़ों से ही उन्हें अपनी रोज़मर्रा की आवश्यकताओं के पूर्ण होने की आशा है। ब्रिटिश-डिप्टीकमिश्नर ही उनका माई-बाप है, और डिप्टीकमिश्नर भी गाँववालों के दुःखों को दूर करने की चिंता में दिन-रात लवलीन रहता है!"

क्या कहना ! अँगरेज़ डिप्टीकमिश्नर, जिसे टैनिस और शिकार खेलने, डान्स और टी-पार्टी मे ही फ़ुर्सत नहीं मिलती, भारतीय ग्रामीणों के दुःख दूर करने की चिंता में ही तो डूबा रहता है ! तभी तो भारत की सालाना आमदनी प्रति मनुष्य २७) रुपए है ! प्रतिमास दो रुपया, ४ आने !! प्रतिदिन चार पैसे से कुछ ही ज्यादा !! विदेशी शासन भारत में देहातियों की हित-साधना नहीं, उनके मुँह की रोटी तक छीने जा रहा है। १८१३ ई० में पार्लियामेंट की एक कमेटी भारत के विषय में जाँच करने को आई थी। उसने कुछ गवा-हियाँ भी ली थीं। गवाहों में वारन हेस्टिंग्स, टामस मनरो-जैसे व्यक्ति शामिल थे। इन गवाहों से क्या प्रश्न पूछे गए ?—यह कि 'भारत में ब्रिटिश वस्तुओं की माँग किस भाँति बढ़ सकती है ?' ब्रिटिश ब्युरोक्रेसी का एक-एक व्यक्ति अपने देश के व्यापार बढ़ाने का भारत में एजंट है, गाँव-वालों की उसे तनिक भी परवा नहीं, वे जीते हैं या मरते हैं। सर पी० सी० रे ने ठीक कहा है कि एक आना रोज़ कमानेवाला भारतीय मांचेस्टर के जुलाहे का, जो ३ रु० ५ आना रोज़ कमाता है, पेट क्यों भर रहा है ? किंतु यह सब ब्रिटिश सरकार के उन्हीं डिप्टीकमिश्नरों के ज़ोर पर होता है, जिन्हें भारतीय ग्रामीणों की चिंता रात-दिन व्याकुल किए

रखती है !! जिन दिनों खद्दर का प्रचार हो रहा था, उन दिनों विहार के एक मैजिस्ट्रेट ने गाँवों में विदेशी कपड़ा बेचने के लिये फेरीवाले भेजे थे और धारवाड़ के कलेक्टर ने खादी का बहिष्कार करने के नोटिस जारी किए थे। पीछे से पता चला कि ये नोटिस भारत-सरकार के निर्देशानुसार सब प्रांतों में जारी किए गए थे। भारत-सचिव लॉर्ड सेलिसबरी के १८७५ में कहे गए प्रसिद्ध शब्द—'India must be bled'—'भारत का खून अवश्य ही चूसना होगा'—किसे भूल सकते हैं ? भारत का खून चूसकर ही तो जर्मन-महायुद्ध में अँगरेज लोग १० करोड़ रुपया रोज साढ़े चार वर्ष तक लगातार खर्च करते रहे। यह रुपया क्या इँगलैंड के पेड़ों पर से झड़ा था ? इतने सालों के निरंतर अत्याचार से चूसे हुए भारतीय देहातियों के खून से यह रुपया लतपत था ! 'उस समय भूखे भारत से २०० करोड़ रुपए भारत सरकार ने उधार के तौर पर लिए थे। पर पीछे भारतीयों को भुलावा देकर एक सभा की गई और उसमें प्रस्ताव, अनुमोदन, समर्थन सब हाँ-हजूरों से कराकर यह प्रस्ताव भारत की ओर से पास किया गया कि भारतवासी ब्रिटिश-प्रजा के नाते दो सौ करोड़ का दिया हुआ ऋण छोड़ देते हैं।' क्या मिस मेयो को मालूम नहीं कि भारत में डिप्टीकमिश्नर इसी धुन में रहा

करते हैं ?—क्या देहातियों की हितचिंता इसी का नाम है ?

मिस मेयो लिखती है कि उसने एक बार म० गांधी से पूछा—"आपके पढ़े-लिखे नौजवान यदि राजनैतिक लड़ाई को छोड़कर गाँवों में जा बैठें और किसानों की सेवा में अपने को मिटा दें, तो क्या भारत की अमूल्य सेवा न होगी ?"

म० गांधी ने कहा—"बिलकुल ठीक, परंतु यह तो 'Counsel of perfection' है !"—यह लिखकर मेयो एक और घटना का उल्लेख करती है—"कलकत्ता के चार प्रसिद्ध राजनैतिक कार्यकर्ताओं से मैंने यही प्रश्न पूछा, 'क्या यह अच्छा न हो कि यदि आप लोग अपने वैयक्तिक तथा राजनैतिक स्वार्थों की आहुति देकर, गाँवों में जाकर, भारत को नींव से उठाने के कार्य में मिट जाओ ? क्या भारत-माता की ऐसी सेवा आदर्श सेवा न होगी ? बीस वर्ष में शायद आप लोग इतना काम कर सकेंगे कि इस समय जिस राजशक्ति को आप क्रोध में आकर माँग रहे हैं, वह स्वयं आपके हाथों में आ लौटेगी ?'—उनमें से तीन ने कहा—'शायद आपका कहना ठीक है, परंतु चिल्लाना भी तो कम काम नहीं है। इस समय तो यही बड़ा भारी काम

है! जब तक हम विदेशियों को निकालकर बाहर नहीं कर देते, तब तक कुछ नहीं किया जा सकता!!' "—मिस मेयो के इन परामर्शों से भारत के राजनैतिक कार्यकर्ताओं को शिक्षा लेनी चाहिए। उसकी हरएक बात झूठी नहीं है।

एक अमेरिकन ने मिस मेयो से कहा—"If I were running this country I would close every University to-morrow. It was a crime to teach them to be clerks, lawyers and politicians till they had been taught to raise food."

"यदि मैं इस देश का शासन कर रहा होता, तो मैं कल ही सब विद्यालय बंद कर देता। जिन लोगों को रोटी तक कमाना नहीं सिखाया गया, उन्हें क्लर्क, वकील और राजनैतिक कार्यकर्ता बना देना भारी पाप हुआ!"—बस, इस पाप की जड़ है ब्रिटिश सरकार की शिक्षानीति। उन्होंने तो संपूर्ण देश को क्लर्कों की फ़ौज से भर दिया। एक और अमेरिकन शिक्षक ने, जो देर तक किसी भारतीय कॉलेज के अध्यक्ष रहे हैं, मिस मेयो से कहा—

"After 20 odd years of experience in India I have come to the conclusion that the whole system here is wrong. These people should have had two generations of primary schools

all over the land, before over they saw a grammar school; two generations of grammar schools before the creation of the first high-school; and certainly not before the seventh or eighth generation should a single Indian University have opened its doors."

"मैं भारतवर्ष में २० साल के अपने अनुभव से इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि सारी शिक्षा-प्रणाली ही दूषित है। दो पीढ़ियों तक तो यहाँ संपूर्ण देश में प्रारंभिक स्कूल ही खोलने चाहिए थे, उसके बाद दो पीढ़ियों तक मध्य-विभाग के स्कूल संपूर्ण देश में खुलने चाहिए थे, और फिर जाकर पहला हाई-स्कूल खुलना चाहिए था। पहली यूनीवर्सिटी तो सातवीं या आठवीं पीढ़ी में जाकर खुलनी चाहिए थी!"

चतुर्थ भाग

'मदर-इंडिया' के चतुर्थ भाग का प्रारंभ महात्मा गांधी के नाम से हुआ है, परंतु इस भाग में महात्मा गांधी के उद्धरण उतने ही दिए गए हैं, जितने पहले तीन भागों में।

मिस मेयो का कथन है कि भारतीय लोग शिकायत करते हैं कि भारत की सैकड़ों मील भूमि सरकार ने 'सालवेशन आर्मी' को क्यों दे दी है? प्राचीन काल में यहीं पर तो जानवर चरते थे। आज गौओं को चारा नहीं मिलता, क्योंकि जंगलों को सरकार ने हथिया लिया है, या 'साल-वेशन आर्मी' को मुफ़्त दे दिया है। मिस मेयो की मंशा इस आक्षेप का उत्तर देने की है। वह १७वें अध्याय में इस प्रकार लिखती है—

"राजा हो या रंक हो, गौ सबकी पूजनीय माता है, पवित्र है। *जब कोई हिंदू मरे, तो गौ निकट होनी चाहिए,* ताकि अंतिम श्वास छोड़ते समय गौ की पूँछ उसके हाथ में हो, और किसी लिये नहीं, तो इसलिये ही, गौ को सदा घर में रक्खा जाता है! जब काश्मीर के महाराज की मृत्यु-समय निकट था, तब कहा जाता है कि निर्दिष्ट गौ

लाख कोशिश करने पर भी महाराज के कमरे में न घुसी। फिर क्या था, महाराज को उठाकर बड़ी तेजी से गौ के पास ले जाया गया, ताकि उसकी पूँछ पकड़े-पकड़े ही उनका प्राणांत हो।"

मिस मेयो लिखती है कि प्रातःकाल भारत में अनेक लोग लोटा लिए गौ के पीछे-पीछे जाते दिखाई देते हैं, ताकि वह पेशाब करे और वे इकट्ठा कर लें। इस पेशाब से कई लोग आचमन करके अपने सिर पर छींटे भी देते हैं, ताकि वे पवित्र हो जायँ।

गौ की दुम पकड़कर स्वर्ग जा सकते हैं या नहीं, इसका उत्तर तीर्थों के पंडों को और उन पढ़े-लिखे लोगों को, जो इस बात में विश्वास रखते हैं, देना चाहिए। हाँ, गोमूत्र में कुछ गुण हैं या नहीं, यह वैद्यक का विषय है। इसकी खिल्ली उड़ाने से पहले मिस मेयो को डॉक्टरों से सलाह ले लेनी चाहिए थी। डॉ० मुथु, जिन्होंने लंडन में ४२ साल तक डॉक्टरी की है, मिस मेयो के इस कथन की आलोचना करते हुए लिखते हैं—"हिंदुओं में गोमूत्र का उपयोग चिकित्सा-संबंधी सिद्धांतों पर आश्रित है। इँगलैंड में तो एक ऐसी सोसाइटी खुली है, जो कई बीमारियों में मनुष्य के मूत्र का भी प्रयोग बतलाती है; क्योंकि उसमें कई उपयोगी

लक्षण हैं। हिंदू लोग मलेरिया तथा अन्य बीमारियों के लिये गो-मूत्र का प्रयोग करते हैं। इसमें अमोनिया घनीभूत मात्रा में होता है, और इसीलिये क्षयरोग में इसका इस्तेमाल किया जाता है। हजारों वर्ष हुए, सुश्रुत ने इसका यही उपयोग बतलाया है। इँगलैंड में भी ऐसी संस्थाएँ खुल रही हैं। १६११ में क्षयरोगियों के लिये ब्रेडफोर्ड में पहली संस्था खुली थी, जिसमें अमोनिया का सूँघना ही इस रोग की चिकित्सा समझी गई थी। तभी भारतीय वैद्य क्षय-रोगी को बकरियों के अहाते में सोने का परामर्श देते हैं; क्योंकि उनके मूत्र से भी अमोनिया बहुत मात्रा में निकलता है। मालूम पड़ता है कि मिस मेयो ने इस विषय पर लिखते हुए चिकित्सा-संबंधी दृष्टि को बिलकुल भुला दिया है।"

मिस मेयो लिखती है कि भारतीय लोग योरपियनों से हाथ मिलाते हुए समझते हैं कि वे उनके स्पर्श से अपवित्र हो जायँगे। "एक कट्टर राजा तो योरपियन लोगों से मिलते समय हाथों पर दस्ताने रखता है, ताकि उसके हाथों को कोई छू न सके। कहा जाता है कि एक समय लंडन में एक भोज, दिया गया। जब राजा ने भोजन के समय हाथों से दस्ताने उतारे, तो उसके समीप बैठी हुई एक महिला की नज़र उसकी अँगूठी पर पड़ी।

" 'महाराज! आपकी अँगूठी में तो महार्घ्य मोती लगा है!'—उस महिला ने कहा, 'क्या मैं इसे देख सकती हूँ?'

"राजा ने कहा—'बेशक!'—और अँगूठी उतारकर उसने उस महिला की थाली के निकट रख दी।

"वह महिला उच्च घराने की थी। उसने मोती को इधर-उधर फेरकर देखा, प्रकाश के सामने देखा, उसकी प्रशंसा की, और, धन्यवाद देकर, उसे राजा की थाली के निकट रख दिया। राजा ने आँख के इशारे से पास खड़े नौकर को, जो समीप ही खड़ा था, बुलाया और कहा—'इसे धो लाओ।'—यह कहकर वह राजा फिर वैसे ही मजे से बातें करने लगा।"

इसके बाद १८वाँ अध्याय खुल जाता है, जो "गौ" पर है। 'इंडियन इंडस्ट्रियल कमीटी' की रिपोर्ट में से एक गवाह की नीचे लिखी गवाही दी गई है—

"Have these slaughter-houses aroused any local feeling in the matter?"

"They have aroused," said the witness, "local feelings of greed and not of indignation. I think you'll find that many of the municipal

members are shareholders in these yards. Brahmans and Hindus are also found shareholders."

"क्या इन क़साईख़ानों से स्थानिक लोगों में कुछ हलचल उत्पन्न हुई है ?"

गवाह ने जवाब दिया—"इनके खुलने से क्रोध के नहीं, परंतु लोभ के भाव अवश्य उत्पन्न हुए हैं। इन क़साईख़ानों के हिस्सेदारों में काफ़ी संख्या म्यूनिसिपैलिटी के मेंबरों की है। इनके हिस्सेदारों में बहुत-से हिंदू तथा ब्राह्मण भी हैं।"

बैलों पर जो अत्याचार होता है, उसका चित्र भी मिस मेयो ने खींचा है—"कलकत्ते में हावड़ा के पुल पर आप घंटों तक खड़े समीप से गुज़रती हुई बैल-गाड़ियों को देखते जाइए, एक भी बैल ऐसा नहीं मिलेगा, जिसकी पूँछ हड्डियों के टूट जाने से टेढ़ी न हो गई हो। हाँकनेवाला बैल को डंडे से चलाने की जगह बैल की पूँछ हाथ में पकड़कर उसके जोड़ों को ऐसे मरोड़ता है कि पूँछ की हड्डी-हड्डी अलग हो जाती है। यदि आप गाड़ी में चढ़ जायँ, तो आपको मालूम होगा कि बैलों को तेज़ चलाने के लिये गाड़ीवान एक और नया ढंग इस्तेमाल करता है। अपने डंडे से या पाँव के अँगूठे के लंबे और सख़्त नाख़ूनों से वह बार-बार बैल के अंडकोषों पर प्रहार करता है, जिससे बैल जल्दी चलने लगते हैं।

"भारत में अनेक स्थानों पर 'फूका' की प्रथा प्रचलित है। इस प्रथा का उद्देश्य गौ के दूध को बढ़ाना है। इसके कई तरीक़े हैं, परंतु अधिक प्रचलित यह है कि एक लकड़ी लेकर उस पर तिनके बाँध दिए जाते हैं, और लकड़ी को गौ की योनि में डालकर खूब दाएँ-बाएँ घुमाया जाता है। इससे गौ को जलन पैदा होती है, जिससे कुछ दूध ज्यादह आ जाता है। गांधीजी का कथन है कि कलकत्ते की गौशालाओं में १०,००० गौओं में से ५,००० पर नित्य प्रति यह अत्याचार होता है।

"गौओं पर इससे भी बड़े-बड़े अत्याचार किए जाते हैं—गौ को आम के पत्ते खिलाए जाते हैं और कुछ खाने को नहीं दिया जाता। पानी भी उसे नहीं छूने दिया जाता। उसके मूत्र का एक प्रकार का रंग बनता है, जो बहुत महँगा बिकता है। इस प्रयोग से गौ को इतना कष्ट होता है कि वह तड़प-तड़पकर मर जाती है। गौ की बछिया को मारना हिंदुओं के यहाँ पाप है, परंतु उसके पालने के खर्च को ये उठाना नहीं चाहते। पहले थोड़ा-थोड़ा दूध पीने देते हैं, इतना थोड़ा जिससे वह केवल जिंदा रह सके। बछिया दिनोंदिन कमजोर होने लगती है, लड़खड़ाती-लड़खड़ाती मर जाती है। इस प्रकार उसे मारने में पाप नहीं समझते।

यह शायद उसके कर्मों की गति है! बछिया के मरने के बाद उसकी चमड़ी में भुस भरकर नीचे चार लकड़ियाँ लगा देते हैं, दुहते समय उस कृत्रिम बछिया को गौ के सामने खड़ा कर दिया जाता है, ताकि उसे देखकर गऊ खुलकर दूध दे। भैंस के कटड़े को भी घास न देकर और धूप में खड़ा रखकर सुखा दिया जाता है, जिससे वह मर जाय।" मिस मेयो ने १९-२० अध्यायों में गौओं पर किए गए अन्य अत्याचारों का चित्र खींचते हुए लिखा है कि धार्मिक गोशालाओं में दानी लोग जो कुछ दे जाते हैं, उसे गोशाला-वाले ही खा जाते हैं और गौएँ सूख-सूखकर ऐसी कमजोर हो जाती हैं कि उनकी नोकीली हड्डियाँ चमड़ी को चीर-चीर-कर बाहर निकल आती हैं। 'गोरक्षा' की रट लगानेवाले हिंदुओं के घरों में गौ की यह क़द्र है, तभी २०वें अध्याय का शीर्षक दिया गया है—'In the House of Her Friends'—'गो रक्षकों के घरों में गौ का हाल!' मिस मेयो का यह ताना कितना गहरा परंतु कितना सच्चा है!

यह कहना कि योरप में प्राणि-हिंसा भारत से ज़्यादह होती है और पशुओं को अत्यंत घोर कष्ट देकर होती है, ताकि उनकी मोटी-मोटी चमड़ी उन्हें मिल सके, मिस मेयो के आक्षेपों का उत्तर नहीं है! योरप में गो-रक्षा, प्राणि-रक्षा या

अहिंसा की रट ही कम लगाई ? हाँ, गौ को माता पुकारने-वाले हम लोगों के हाथों जब तक गौ का यह हाल रहेगा, तब तक मिस मेयो के प्रश्न प्रत्येक हिंदू-धर्माभिमानी की छाती को टकरा-टकराकर उसे तंग करते रहेंगे, और उसकी आत्मा में खलबली मचाते रहेंगे।

बाईसवाँ अध्याय 'सुधारों'—'Reforms'—पर है। इसमें दिखाया गया है कि कितने महान् अधिकार भारतीयों को दे दिए गए हैं। इस अध्याय में भी एक असंबद्ध चुटकला छोड़ा गया है। लिखा है—"भारतवासी, साधारण अर्थों में नहीं परंतु परमार्थिक अर्थों में, 'सचाई के उपासक' हैं। वे परस्पर की बातचीत में अनेक स्थलों पर तो बड़ी साफ़-साफ़ बात कह जाते हैं, परंतु फिर भी समय-समय पर देखा जाता है कि उनकी स्पष्ट उक्तियों में कई ऐसी बातें होती हैं, जिनमें झूठ का कुछ-न-कुछ अंश कहीं-न-कहीं मिला रहता है। जब बार-बार यह बात देखी गई, तो मैंने एक प्रसिद्ध बंगाली के सम्मुख यह समस्या उपस्थित की। उसने कहा—'महाभारत में लिखा है, सत्या-न्नास्ति परोधर्मः। यदि हम सचाई से परे चले जायँ, तो इसका कारण यह है कि जिन उल्टी परिस्थितियों में हम रहते हैं, उन-का हम पर प्रभाव पड़ गया है। झूठ बोलने का अभिप्राय यह है कि हम सच बोलने के परिणामों से डरते हैं।' फिर मैंने

यही प्रश्न एक योगी के सम्मुख रक्खा। उसने कहा—'सत्य क्या वस्तु है? भलाई तथा बुराई तो सापेक्षिक शब्द हैं। तुम्हारा अपना 'माप' बना होता है। उस माप पर जो कुछ ठीक उतरे, उसे ही तो तुम 'भला' कहते हो! अतः 'भलाई' को पैदा करने के लिये यदि कुछ कहना पड़े, तो वह झूठ नहीं है। मेरे लिये भलाई-बुराई में कोई भेद नहीं है। हरएक चीज़ भली है। अपने में कोई चीज़ बुरी नहीं है। भली या बुरी, नीयत होती है, काम नहीं।' इन दोनों से जब संतोष न हुआ, तब मैं एक योरपियन के पास अपनी समस्या को ले गई। वह बहुत दिनों से भारत में रहता था। मैंने पूछा—'भारतवर्ष में उच्च स्थितियों के व्यक्ति ऐसी-ऐसी झूठी बातें क्यों कह जाते हैं, और साथ अपने कथन की पुष्टि में ऐसे-ऐसे हवाले भी दे जाते हैं, जिनको पता लगाने पर मालूम होता है कि उनका कोई आधार था ही नहीं?' उसने कहा—'क्योंकि हिंदू के लिये झूठ कोई चीज़ नहीं है। सब कुछ माया है, अतः माया के संबंध में जो कुछ कहा जाय, वह भी माया ही है। इसीलिये अपने उद्देश्य की सिद्धि में हिंदू लोग जो भी झूठ बोलना चाहें, बोल सकते हैं। और, जब एक हिंदू मन से बात बनाकर कह रहा होता है, तब उसे यह नहीं सूझता कि तुम उसकी बातों की यथार्थता का पता लगाने का भी कष्ट करोगी'।"

मिस मेयो की सत्यान्वेषण-बुद्धि पर बलिहारी ! पहले उसने एक भारतीय बंगाली के सम्मुख अपने मन की शंका रक्खी, फिर एक योगी के दर्वाजे की खाक छानी और अंत में जाकर एक योरपियन ऋषि के आश्रम में दौड़ी गई, और वहीं उसकी शंका का समाधान हुआ। सब हिंदू झूठे हैं—यह लांछन लगाया गया है, उदाहरण एक भी नहीं दिया गया, चुटकले छोड़कर ही काम निकालने की मंशा है ! हिंदू झूठे हैं या नहीं, इसे मिस मेयो सिद्ध नहीं कर सकी; हाँ, 'मदर-इंडिया' में हवाले दे-देकर कई ऐसी बातें लिखी गई हैं, जो निराधार सिद्ध हो चुकी हैं। महात्मा गांधी ने, जिनके नाम से 'चतुर्थ भाग' प्रारंभ होता है, स्पष्ट लिखा है—"She has not only taken liberty with my writings but she has not thought it necessary even to verify through me certain things ascribed by her and others to me."—अर्थात्, "मिस मेयो ने मेरे लेखों का, जहाँ-तहाँ पूर्वापर का खयाल न रखते हुए, इस्तेमाल किया है। साथ ही, उसने मेरे नाम से, स्वयं अथवा दूसरों के कहने से, कई ऐसी बातें भी लिख डाली हैं, जिनकी यथार्थता को मुझसे पूछने की उसने आवश्यकता ही नहीं समझी।" क्या इसी सत्यान्वेषण-

बुद्धि के सहारे मिस मेयो सब हिंदुओं को झूठा सिद्ध करने के प्रयत्न में है ? झूठ बोलकर किसी को भी झूठा सिद्ध करना शायद बहुत आसान काम है !

अगला अध्याय है, 'Princes of India'—'भारत के राजा लोग'। मिस मेयो इसमें अपने एक अमेरिकन दोस्त की किसी राजा और उसके दीवान से बातचीत लिख रही है—

"His Highness does not believe," said the Dewan, "that Briton is going to leave India. But still, under this new regime in England, they may be so ill-advised. So, His Highness is getting his troops in shape, accumulating munitions and coining silver. And if the English do'go, three months afterward not a rupee or a virgin will be left in all Bengal."

दीवान ने कहा—"महाराज को यह विश्वास नहीं कि अँगरेज़ लोग भारतवर्ष को छोड़कर चले जायँगे। परंतु तो भी, शायद, इँगलैंड में इस नए शासन में, उन्हें यही सलाह कहीं पसंद आ जाय ! इसलिये महाराज अपनी फ़ौजों को तैयार कर रहे हैं, बारूद इकट्ठा कर रहे हैं और रुपए बनवा रहे हैं। यदि इँगलैंड चला जायगा, तो तीन महीने के पीछे

सारे बंगाल में एक रुपया भी न बचेगा ; और—और, एक कुँआरी भी न बची रहेगी !"

कौन नहीं जानता कि कुँआरियों का सतीत्व नष्ट करनेवाले कौन लोग हैं और किनकी विषय-वासना की प्रचंड ज्वालाओं में अनेकों अबलाओं का जीवन नष्ट हो जाता है ? ऐसे लोगों के मुख से निकली हुई बेहूदा बातों पर विश्वास करना या उनके हवाले देना मिस मेयो के ही पल्ले पड़ा है !

" Our treaties are with the crown of England," one of them said to me, "the princes of India made no treaty with a Government that included Bengali Babus. We shall never deal with this new lot of Jacks-in-office. While Britain stays Britain will send us English gentlemen to speak for the King-Emperor, and all will be as it should be between friends. If Britain leaves, we, the princes, will know, how to straighten out India, even as princes should."

एक राजा ने मिस मेयो से कहा—"हमारी संधियाँ इँगलैंड के साथ हैं । भारत के राजाओं ने ऐसी गवर्नमेंट के साथ कोई संधि नहीं की, जिसमें 'बंगाली-बाबू' भरे हुए हों । इन 'नौकरी ढूँढ़नेवालों' के साथ हम कोई सरोकार नहीं

रक्खेंगे। जब तक ब्रिटेन भारत में है, तब तक वह सम्राट् के प्रतिनिधियों को यहाँ भेजता ही रहेगा और हमारा-उनका बिरादराना ताल्लुक़ रहेगा। यदि ब्रिटेन चला जायगा, तो राजा लोग जानते हैं, हिंदुस्तानियों को कैसे सीधा किया जाय !"

मिस मेयो इसके आगे लिखती है—"Then, I recall a little party given in Delhi by an Indian friend in order that I might privately hear the opinions of certain Home Rule politicians. They had spoken at length on the coming expulsion of Briton from India and on the future in which they themselves will rule the land.

'And what', I asked, 'is your plan for the princes?' 'We shall drive them out', exclaimed one with conviction. And all the rest nodded assent."

"उक्त राजा की बातें सुनने के बाद मुझे याद है, मुझे दिल्ली के एक भारतीय मित्र ने एक पार्टी दी, ताकि मैं एकांत में होमरूलों की बातें सुन सकूँ। जब बहुत देर तक वे लोग अँगरेज़ों को भारतवर्ष से निकालने तथा स्वयं इस देश में शासन करने पर बोल चुके, तो मैंने पूछा—'भारत के राजों

को ठीक करने के लिये आप लोगों की क्या तजवीज है ?' एक ने दृढ़ विश्वास से कहा—'उन्हें हम मटियामेट कर देंगें !' और, बाक़ी ने सिर झुकाकर इसका अनुमोदन किया।"

लाला लाजपतराय लिखते हैं कि इस घटना का पता लगाने पर मालूम हुआ है कि मिस मेयो के ये मित्र जिन्होंने उन्हें दिल्ली में पार्टी दी थी, एसोशिएटेड प्रेस के के० सी० राय हैं। के० सी० राय तथा उनकी पत्नी, दोनों का कहना है कि उस पार्टी में पति-पत्नी के अतिरिक्त एसोसिएटेड प्रेस के मि० सेन भी मौजूद थे, और बाहर का कोई व्यक्ति इस पार्टी में मौजूद नहीं था। जिस बात का जिक्र मिस मेयो ने किया है, वह वहाँ बिलकुल नहीं हुई ! यह है मिस मेयो की सत्य-प्रियता। उक्त घटना का उल्लेख ही बता रहा है कि वह सच नहीं हो सकती। भारतवर्ष के होमरूलर मिलकर, एकांत में, मिस मेयो के सामने स्वराज्य की चर्चा करें और मिस मेयो उनसे पूछे कि राजाओं के लिये क्या स्कीम तैयार की गई है, यह तभी संभव हो सकता है, जब मिस मेयो को किसी षड्यंत्रकारी पार्टी में निमंत्रित किया गया हो, और वह उनका भेद पता लगाने के लिये उनका बिलकुल अंग बन गई हो ! चार महीनों में मिस मेयो ने सब कुछ करके सचमुच राजय ढा दिया है !

२४वें अध्याय में हिंदू-मुसलमानों के झगड़ों पर लिखा गया है—"स्वराज्य के संदेश-हर मोपला लोगों के पास भी भेजे गए। मोपला मुसलमान थे। उनके लिये तो स्वराज्य का अर्थ मुसलिम-राज्य था, जिसमें एक भी मूर्ति न हो। उन लोगों ने चाकू, उस्तरे, डंडे इकट्ठे करने शुरू किए। २० अगस्त, १६२१ को मोपला लोग हिंदुओं पर टूट पड़े; काफ़िरों को मुसलमान बना लेना ही तो उनके लिये स्वराज्य था। इस उपद्रव में तीन हज़ार मोपला मारे गए, और न-जाने कितने हिंदुओं को यमपुर पहुँचा गए। ६ महीने तक सरकारी फ़ौजें पड़ी रहीं। मोपलों ने जिस हिंदू को देखा, उसका ख़तना कर दिया, कइयों के ख़ून में विष का संचार हो गया। वे लोग इसी अवस्था में मदरास-भर में फिर रहे थे और अपने सहधर्मियों को बतला रहे थे कि यदि स्वराज्य मिल गया, तो तुम सबकी भी यही दुर्दशा होगी, जो हमारी हुई।" एक अमेरिकन ने, जिसने ये बीभत्स दृश्य देखे थे, मिस मेयो से कहा—

"I saw them in village after village, through the south and east of Madras Presidency. They had been circumcised by a peculiarly painful method, and now, in many cases, were suffering

tortures from blood-poisoning. They were proclaiming their misery, and calling on all their gods to curse Swaraj and to keep the British in the land. 'Behold our miserable bodies! we are defiled, outcasted, unclean, and all because of the serpents who crept among us with their poison of Swaraj. Once let the British leave the land and the shame that has befallen us will assuredly befall you also, Hindus, man and woman, everyone'.

"The terrors of hell were literally upon them."

"मैंने उन्हें गाँव-से-गाँव में, मदरास-प्रांत में, दक्षिण-पूर्व, जाते देखा। उनके अजीब तरह से, किसी दर्दनाक तरीक़े से ख़तने किए गए थे, और अब, अनेक व्यक्ति, रुधिर में विष-संचार हो जाने की असह्य वेदना से तड़प रहे थे। वे अपने दुःख की चिल्ला-चिल्लाकर घोषणा कर रहे थे और अपने देवतों को संबोधन कर 'स्वराज्य' को अभिशापित करने की दुआ माँग रहे थे और अँगरेज़ों के भारत में टिके रहने की प्रार्थना कर रहे थे! वे कह रहे थे—'देखो हमारे शरीरों की दुर्दशा! हम अपमानित हुए, जाति-बहिष्कृत हुए, केवल इसलिये क्योंकि कुछ साँप अपना 'स्वराज्य' का

विष लेकर हममें आ घुसे ! एक बार भी अँगरेज़ इस भूमि को छोड़कर चले जायँ, तो जो बेइज़्ज़ती हमारी हुई है, वह हरएक हिंदू, स्त्री-पुरुष, की होगी !"

"सचमुच वे लोग नरक की यातना भोग रहे थे !"

इसमें संदेह नहीं, मोपला-विद्रोह भारत की अमर कीर्ति पर कलंक है, परंतु मोपला-विद्रोह का कारण स्वराज्य की पुकार नहीं, अपितु वह जटिल 'हिंदू-मुसलिम-समस्या' है, जिसे भारत को किसी-न-किसी दिन हल करना ही है। मोपला-विद्रोह में हिंदुओं पर ऐसे-ऐसे भयंकर अत्याचार होने का एक ख़ास कारण है। स्वराज्य की पुकार में महात्मा गांधी ने ख़िलाफ़त के प्रश्न को साथ मिला दिया था। मुसलमान लोग यह समझने लगे थे कि वे स्वराज्य के लिये इसलिये कोशिश नहीं कर रहे, क्योंकि 'स्वराज्य' की ज़रूरत है, परंतु इसलिये क्योंकि इसलाम ख़तरे में है। मुसलमानों के सामने स्वराज्य का इतना ही पहलू रहा, जिसका उनके लिये अभिप्राय था, 'इसलाम की रक्षा !' इस इसलाम की रक्षा में मोपलों ने हिंदू तथा अँगरेज़—दोनों पर वार किया, परंतु अँगरेज़ उनके हाथ नहीं आए, और हिंदू क्योंकि पर्याप्त संख्या में वहाँ थे, मारे गए, लुट गए, घायल हुए। महात्मा गांधी ने मुसलमानों में 'देशभक्ति' के भाव उत्पन्न

करने के स्थान में खिलाफत के प्रश्न को अपनाकर 'इसलाम-भक्ति' के भाव पैदा कर दिए। मौक़ा मिलते ही कट्टर मुसलमानों का, रग-रग में बसा हुआ पशुपन जाग उठा और इसलाम की इतिहास-प्रसिद्ध तेग़ चलने लगी। मुसलमानों की इस क्रूर कट्टरता का नग्ननृत्य देखकर देश सँभल रहा है। अब या तो मुसलमानों को 'इसलाम की रक्षा' का शोर छोड़कर 'देश की रक्षा' की फ़िक्र करनी होगी, या हिंदुओं के जाग जाने के अगले दिन उनका इसलाम ही, जो देश में तनाव उत्पन्न करने का कारण है, ख़तरे में पड़ जायगा। इसके अतिरिक्त, हिंदू-मुसलमानों को लड़ाना किसी तीसरे दल का स्वार्थ समझा जाता है। यह झगड़ा पहले नहीं था, इसे यह तूल-रूप दिया गया है। मिंटो-मोर्ले सुधारों का वर्णन करते हुए लॉर्ड मोर्ले ने अपने 'रिकोलेक्शंस' में मिंटो को लिखी एक चिट्ठी दी है, जिसमें उसे संबोधित करके लिखा है—'You started the Muslim hare.' घटना का स्वरूप यह है कि सुधारों की घोषणा करने से पहले मिंटो ने कुछ मुसलमानों को बुलाकर कहा कि तुम अपनी जाति के लिये जाति-गत-प्रतिनिधित्व (Communal representation) माँगो, तुम्हें दिया जायगा। तब से हिंदू-मुसलमानों के धार्मिक झगड़े ने राजनीति के क्षेत्र में पदार्पण किया और भारत

की जातीयता के वायु-मंडल में विष का संचार कर दिया। इस समय हिंदू-मुसलमानों के झगड़े धार्मिक तथा राजनैतिक दोनों क्षेत्रों में दिखाई देते हैं। धार्मिक क्षेत्र में तो उनकी भिन्नता थी ही, राजनैतिक क्षेत्र में भी सरकार की भेद-नीति के कारण भिन्नता आ गई है। और, आए दिन दोनों की सिरफुटौअल हुआ करती है, जिसका तमाशा हमारी सरकार बड़े मज़े से देखा करती है। इन दोनों में से, धार्मिक झगड़े को हम सुलझा लेंगे। आज नहीं तो कल यह झगड़ा शांत हो जायगा; परंतु राजनैतिक झगड़े की शांति का एक-मात्र उपाय सरकार के हाथ में है। यदि राजनैतिक अधिकारों का बँटवारा 'हिंदू' या 'मुसलमान' होने के कारण किया जायगा, तो झगड़े की जड़ें भी पाताल की तरफ चलती चली जायँगी। इस झगड़े को शांत करने के लिये, 'हिंदुत्व' या 'मुसलत्व' को भुलाकर, 'भारतीयत्व' को निखारना होगा—और उसका उपक्रम सरकार पर ही निर्भर है। राजनीति के क्षेत्र में इन भेदों को मिटा दिया जाय, तो धार्मिक क्षेत्र में झगड़े रहेंगे ही नहीं। कम-से-कम उनका तीखापन अवश्य चला जायगा। धार्मिक झगड़े तो वैसे इस २०वीं शताब्दी में इँगलैंड में भी हो रहे हैं। २३ जून, १९२६ को रूटर ने लंडन से तार दिया था—'लिवरपूल के ५० स्कूल कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट लड़कों और उनकी

माताओं की पारस्परिक लड़ाई के कारण बंद हो गए।' २६ जून, १९१० का लंडन का एक तार था—'लिवरपूल का कैथोलिक पादरी अपने घर को जा रहा था, रास्ते में प्रोटेस्टेंट लोगों ने उसकी गाड़ी पर पत्थर फेंके।' अगस्त, १९१० का तार था—'दक्षिणी वेल्स में यहूदियों पर आक्रमण हो रहा है। यहूदी लोग भाग-भागकर कारडिफ में इकट्ठे हो रहे हैं। वारगोड और गिलफैच में अभी उपद्रव जारी है। सेनघनयोड में यहूदियों की दो दुकानें जला दी गई हैं।' योरप में आज यह धार्मिक असहिष्णुता दिखाई देती है। भारत तो धार्मिक सहिष्णुता का केंद्र रहा है। मुसलमानों से सताए जाकर पारसी लोग इसी देवभूमि में आकर तो बचे थे। अलाउद्दीन के कप्तान मलिक काफूर ने जब रामेश्वरम पर आक्रमण किया, तो लौटते समय वहाँ एक छोटी-सी मसजिद बना दी। मलिक चला गया, रामेश्वरम में एक भी मुसलमान नहीं रहा, परंतु वह मसजिद वैसी-की-वैसी खड़ी रही, उसकी एक ईंट को भी किसी ने नहीं हिलाया। औरंगजेब की पोती दुर्गादास के यहाँ छुटपन से रही और दुर्गादास ने उसके लिये खास एक मौलवी रखकर उसे कुरान पढ़ाया, ताकि वह अपने धर्म में ही दीक्षित रहे। १५-१६ वर्ष की आयु में जब लड़की अपने दादा के यहाँ

पहुँचा दी गई, तब वह उसे इसलाम में पहले से ही दीक्षित देख-कर हक्का-बक्का रह गया। हिंदुओं की धार्मिक सहिष्णुता इतिहास-प्रसिद्ध है। उन्होंने तो इसमें 'अति' कर दी है। अब भी भारत में धार्मिक दृष्टि से हिंदू-मुसलमानों का प्रश्न जाति को उद्विग्न नहीं करेगा, उसका तीखापन एकदम मिट जायगा, यदि राजनैतिक क्षेत्र में जिस भेद-नीति का प्रयोग किया जा रहा है, उसे छोड़ दिया जाय!

यह भेद-नीति बड़ी सावधानी से काम में लाई जा रही है, और इसके लिये आपस में पूरी-पूरी सलाहें की तथा दी जाती हैं। १८२१ में एक ब्रिटिश-अफ़सर ने Asiatic Journal में लिखा था—

"*Divide et Impera* should be the motto of our Indian administration, whether political, civil or military."

इसी भाव को मुरादाबाद के लफ़्टीनेंट कर्नल जौन कोक ने १८५७ में इस प्रकार कहा था—

"Our endeavours should be to uphold in full force the (for us fortunate) separation which exists between the different religions and races, not to endeavour to amalgamate them. *Divide*

et Impera should be the principle of Indian Government."

"भिन्न-भिन्न धर्मों में वर्तमान भेद को बनाए रखना, उन्हें *मिलाने का प्रयत्न न करना ही भारतीय शासन का उद्योग* होना चाहिए, इसी में उसकी भलाई है।"

१८५६ में बंबई के गवर्नर ने लिखा था—"*Divide et Impera* was the old Roman Motto and it should be ours."—"रोमन लोग भेद-नीति से ही शासन करते थे, यही तरीक़ा हमें अख्तियार करना चाहिए।"

इन उद्धरणों को पढ़कर हिंदू-मुसलमानों की लड़ाइयों का गुप्त-भेद समझ में आ जाता है।

मोपलों ने जिन हिंदुओं पर अत्याचार किया था, उनकी शुद्धि की चर्चा मेयो ने यों की है—"ब्राह्मण लोग शुद्धि करने के लिये १०० से १५० रुपए तक प्रति व्यक्ति माँग रहे थे, और शुद्ध हुए बिना उन बेचारों की 'मुक्ति' नहीं हो सकती थी! यह शुद्धि भी विचित्र चीज थी! इसमें आँख, कान, मुख, नाक को पहले गौ के गीले गोबर से भरा जाता था, फिर उन्हें गौ-मूत्र से धोया जाता था, अनंतर शुद्ध होनेवालों को घी, दूध, दही खिलाया जाता था। वैसे तो यह संस्कार बड़ा सीधा-सादा मालूम पड़ता है, परंतु इसे बाक़ायदा वेद-

मंत्र पढ़कर ब्राह्मण ही करा सकता है, और अब ब्राह्मण लोग तो अपने मेहनताने की दक्षिणा इतनी माँग रहे थे, जो सब न दे सकते थे। उन लोगों की इस दीनावस्था को देखकर, ब्रिटिश अफ़सरों ने, पहली बार, धर्म में हस्तक्षेप करते हुए, ब्राह्मणों से कहा कि इतने लोग इकट्ठे शुद्ध हो रहे हैं, अतः थोक माल का खयाल करके २० रुपया प्रति व्यक्ति ले लो, और शुद्ध कर दो !"

इसके बाद मिस मेयो ने ४ फ़रवरी, १६२१ की चौरीचौरा की घटना का उल्लेख किया है—"स्वयं सेवक तथा गाँव के लोग लगभग ३००० आदमी पुलिस-स्टेशन के चारों ओर घिर आए, कुछ को गोली मारकर खतम किया, बाक़ी को घायल करके इकट्ठा किया, और उन्हें तेल डालकर जीते-जी भस्म कर दिया। क्योंकि पुलिस-स्टेशन में प्रायः हिंदू ही सरकारी नौकर थे, अतः यह क्रूर तथा कायरता-पूर्ण हृदय-हीन बर्ताव हिंदुओं का हिंदुओं के प्रति हुआ।"

अब सुनिए, हिंदुओं का अँगरेज़ों के प्रति बर्ताव मिस मेयो के शब्दों में ! मिस मेयो लिखती है कि १६१६ में लायलपुर में एक नोटिस लगा था, जो 'Disorders Enquiry Committee' की रिपोर्ट में दिया गया है। वह नोटिस यह था—

"Blessed be Mahatma Gandhi. We are sons of India.....Gandhi. We the Indians will fight to death after you;...what time are you waiting for now? There are many ladies here to dishonour. Go all around India, clear the country of the ladies."

"महात्मा गांधी की जय ! हम भारत के पुत्र हैं...गांधी। हम तुम्हारे पीछे मरते दम तक लड़ेंगे ;...अब किस बात का इंतिज़ार है ? यहाँ काफ़ी औरतें हैं—चारों तरफ़ जाओ और उनका सफ़ाया करो !"

यदि मिस मेयो के अंदर परमात्मा की दी हुई कोई भी आत्मा है, तो क्या वह बाइबिल को हाथ में लेकर, यदि वह बाइबिल को न मानती हो, तो ब्रिटिश सरकार को गवाह बनाकर, यह शपथ खा सकती है कि ऊपर दिया हुआ नोटिस किसी एक-आध व्यक्ति की घृणित-शरारत के सिवाय कुछ और अर्थ रखता है ? क्या सारे असहयोग-आंदोलन में इस प्रकार की एक भी घटना हुई ? हाँ, डायर और ओडवायर ने भारतीय स्त्रियों के साथ जो व्यवहार किया उसकी कहानी भारत का बच्चा-बच्चा जानता है, और उसका ज़िक्र इस पुस्तक में कहीं नहीं !

इसके बाद मिस मेयो ने हिंदू-मुसलिम वैमनस्य दिखाने के लिये लखनऊ के एक दंगे का इस प्रकार उल्लेख किया है—"लखनऊ के शहर के लिये एक 'पार्क' बनाने का प्रस्ताव हुआ। जिस ज़मीन पर पार्क बनना था, उसकी पैमाइश की गई। उसी ज़मीन में एक छोटा-सा हिंदू-मंदिर भी कोने की तरफ़ पड़ता था। सरकार ने अपनी नीति के अनुसार मंदिर को अछूता उसी प्रकार छोड़ दिया। अब मुसलमान भी आए और कहने लगे कि हमें भी इस सुंदर 'पार्क' में कुछ जगह नमाज़ पढ़ने के लिये मिल जाय, तो बहुत कृपा हो। म्यूनिसिपैलिटी ने एक सुंदर-सी जगह मुसलमानों के लिये भी 'पार्क' में रखवा दी। हिंदू अपने मंदिर में और मुसलमान खुली जगह में लगभग ८ वर्ष तक बड़े मज़े में अपना पूजा-पाठ करते तथा नमाज़ पढ़ते रहे। इतने में भारत को नवीन सुधार दिए गए, इन सुधारों के साथ उनका फल भी आया, हिंदू-मुसलमानों का पारस्परिक विरोध बढ़ गया! लखनऊ मुसलमानी शहर है। इसलिये मुसलमान सोचने लगे कि यदि भारत का शासन हिंदुस्तानियों के हाथ में आनेवाला है, तो उनका शहर, लखनऊ, मुसलमानों को ही मिलना चाहिए। परंतु जहाँ लखनऊ में धनियों की संख्या ज़्यादातर मुसलमानों की है वहाँ हिंदू,

मुसलमानों से तिगुने हैं, इसलिये वे आपस में सोचने लगे, यदि स्वराज्य सचमुच मिलनेवाला है तो हम हिंदुओं की लखनऊ में क्या स्थिति रहेगी ? क्या हम लोग मुसलमान-शासकों के नीचे रक्खे जायँगे ? इससे तो अच्छा है, हम जहर खाकर मर जायँ ! बस, यह सोचकर हिंदू लोग संगठन करने लगे, अपनी 'सत्ता' जतलाने लगे । प्रतिदिन सायँकाल 'पार्क' के उस छोटे-से पुराने मंदिर में वे इकट्ठे होकर शोर-शार मचाने लगे। सायँकाल का समय मुसलमानों की नमाज का वक्त होता है। आठ साल तक मुसलमान वहाँ अपने कंबल बिछा-बिछाकर नमाज पढ़ते रहे थे, इसलिये उन्होंने घोषणा कर दी—"हिंदुओं को मंदिर में इकट्ठा होने के लिये ऐसा समय चुनना चाहिए जो मुसलमानों की नमाज के समय से भिन्न हो। हिंदुओं ने मुसलमानों की इस घोषणा पर क्रोध किया; मुसलमानों ने हिंदुओं के क्रोध पर क्रोध किया । बस, फिर क्या था, दोनों दलों के झुंड-के-झुंड लाठियाँ कंधे पर रख-रखकर एक ही समय 'पार्क' में इकट्ठे हो गए ताकि वे लड़-भिड़कर मामले को स्वयं तय कर लें । घमासान युद्ध हुआ जिसमें मुसलमानों ने हिंदुओं को भगा दिया !"

इस घटना से हिंदू-मुसलमानों के पारस्परिक झगड़ों पर

जहाँ प्रकाश पड़ता है, वहाँ यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि सरकार को ऐसी अवस्थाएँ उत्पन्न करने से कोई खास इनकारी नहीं, जिनसे हिंदू-मुसलमानों के झगड़े की आशंका बनी रहे ! साथ ही 'मदर-इंडिया' की एक विशेषता है। जहाँ-तहाँ हिंदुओं को कोसा गया है, उन्हें बदनाम किया गया है, परंतु मुसलमानों के विषय में एक अध्याय लिखा गया है—२५वाँ—'Sons of the Prophet'—'पैग़ंबर की औलाद'—परंतु उस औलाद की बाबत न-जाने उतना प्रकाश क्यों नहीं डाला गया, जितना हिंदुओं के विषय में ?

२६वें अध्याय में बनारस का वर्णन है, इस अध्याय का शीर्षक है 'The Holy City'—'पवित्र शहर' ! बनारस में वैज्ञानिक उपायों से शुद्ध किए पानी को लोग न पीकर गंगा के गंदे भरे पानी को ही पीते हैं और कहते हैं—

"It lies not in the power of man to pollute the Ganges. And, filtering Ganges water takes the holiness out."

"गंगा को अपवित्र कर सकना तो मनुष्य की शक्ति से बाहर है । और, गंगा-जल को नितारने से उसका माहात्म्य निकल जाता है ।" फिर लिखा है—

"Again, whoever dies in Benares goes straight

to heaven. Therefore endless sick, hopeless of cure, come here to breathe their last, if possible, on the brink of the river with their feet in the flood."

"जो बनारस में मरता है, वह सीधा स्वर्ग जाता है। इसलिये अनंत रोगी, जिन्हें अच्छा होने की आशा नहीं रहती, मरने के लिये यहाँ पहुँचते हैं और, यदि संभव हो, तो गंगा के किनारे पावों को गंगा के बहाव में डालकर पड़ जाते हैं ताकि वे इसी हालत में मरें।"

बनारस के स्वास्थ्य-विभाग के अफ़सर के साथ मिस मेयो मरघट पर गई। वहाँ पर ठंडी चिता की राख में कुत्ते कुछ सूँघ रहे थे। मिस मेयो लिखती है—

'See those dogs nosing among the ashes. There—one has found a piece!', said I to the doctor, as we stood looking on.

'Yes', he answered. 'That happens often enough. For they burn bodies here, sometimes rather incompletely, at all hours of day and night. Still, if the dog had not got that bit it would simply have got into the river, to float down among the bathers. As the dead babies do, in

any case. No Hindu burns an infant. They merely toss them into the stream.'

"मैंने कहा, देखो वे कुत्ते सामने की राख की ढेरी में नाक धसा रहे हैं। वह देखो—एक कुत्ते को कोई टुकड़ा मिल गया!" डॉक्टर ने कहा—'हाँ, ऐसा तो अक्सर होता है। यहाँ पर मुर्दों को आधा-सा ही जला देते हैं, और मुर्दे यहाँ दिन-रात जलते रहते हैं। तो भी, यदि कुत्ते को वह टुकड़ा न मिलता, तो वह नदी में कूद पड़ता क्योंकि उसे कोई मुर्दा-बचा तो हर हालत में मिल जाता। कोई हिंदू भी बच्चों को जलाता नहीं है—वे उसे धार में बहा देते हैं।" बनारस के गंद के विषय में लिखा है—

"The river banks are dried sewage. The river water is liquid sewage. The faithful millions drink and bathe in the one, and spread out their clothes to dry upon the other. Then *in due time, having picked up what germs they* can, they go home over the length and breadth of India to give them further currency, carrying jars of the precious water to serve through the year."

"नदी का किनारा शुष्क विष्ठा से, नदी का पानी घुली

हुई विष्ठा से भरा होता है। लाखों भक्त लोग इनमें से एक में स्नान करते हैं तथा दूसरे पर अपने कपड़े सूखने के लिये डालते हैं। फिर, यथावसर, जितने भी रोग-क्रिमियों को वे ले जा सकते हैं, उन्हें संपूर्ण भारतवर्ष में फैलाने के लिये, इस अमूल्य पानी को, घड़ों में भर-भरकर ले जाते हैं, ताकि साल-भर काम आवे!"

एक हिंदू डॉक्टर ने मिस मेयो से बनारस के मंदिरों का वर्णन यों किया—"The temples of Benares are as evil as the ooze of the river banks. I myself went within them to the point where one is obliged to take off one's shoes, because of sanctity. Beyond lay the shrines, rising out of mud, decaying food and human filth. I would not walk in it. I said—No! But hundreds of thousands do take off their shoes, walk in, worship, walk out, put back their shoes upon their unwashed feet."

"बनारस के मंदिर इतने ही गंदे हैं, जितने नदी के किनारे, मैं स्वयं उनमें उस जगह तक गया जहाँ पर पवित्रता के कारण जूता उतारना पड़ता है। सामने मंदिर है, चारों तरफ कीचड़, सड़ा हुआ भोजन तथा विष्ठा पड़ी है। मैं अंदर नहीं

गया। मैंने कहा—'बस'! परंतु लाखों आदमी वहाँ जूता उतारकर, अंदर जाते हैं, पूजा करते हैं, उसी तरह बाहर आते हैं और बिना पैर धोए जूता पहनकर अपने-अपने घरों को चल देते हैं।"

बाजारों का वर्णन करते हुए लिखा है—"Close upon platforms, on both sides of the road, runs an open gutter about a foot wide. Heaped on the lats of the wooden platform, just escaping the utter, are messes of fried fish, rice cakes, ooked curry, sticky sweetmeats and other foods or sale. All the food-heaps lie exposed to very sort of accident, while flies, dirty hands, he nosing of dogs, cows, bulls and sheep and ats constantly add their contributions."

"दुकानों के पास लकड़ी के मंच बने होते हैं, जिनसे लगी ई, सड़क के दोनों तरफ़, एक फुट चौड़ी, खुली, गंद की ाली बह रही होती है। इस मंच के फट्टों पर, नाली से ारा ही बचकर, तली हुई मछली, चावल की रोटी, दाल, चिपचिपी मिठाई तथा दूसरे खाद्य-पदार्थ बेचने के लिये रक्खे होते हैं। इन चीज़ों के ढेर-के-ढेर खुले पड़े रहते हैं और मक्खियाँ, गंदे हाथ, कुत्तों की नासिकाएँ, गौ, बैल, बकरी,

चूहे, सबकी इन पर मेहरबानी होती रहती है ।" फिर लिखा है—

"And you must be careful, in walking, not to brush against the wall of a house, for the latrines of the upper stories and of the roofs drain down the outside of the houses either in leaking pipes or else from small vent-holes in the walls, dripping and stringing into the gutter slow streams that just clear the fried fish and the lollypops."

"चलते हुए सावधान रहना चाहिए कि कहीं किसी घर की दीवाल से छू न जायँ । क्योंकि ऊपरली मँज़िलों की टट्टियों के नल के या दीवार ही फटी होने के कारण सब गंद रिस-रिसकर मकान के बाहर की दीवार पर लगा होता है, और उसका गंदा पानी चू-चूकर नीचे पड़े हुए मछली के टुकड़ों और बतासों को साफ़ कर रहा होता है !"

इस प्रकरण में मिस मेयो ने महात्मा गांधी का निम्न-उद्धरण दिया है—"दक्षिण की तरफ़ देखा गया है कि लोग गलियों तथा बाज़ारों को गंदा करने में कोई कसर नहीं रख छोड़ते । प्रातःकाल गलियों में, दोनों तरफ़ लोगों को कतार बाँधे वह काम करते बैठा देखकर, जो उन्हें

एकांत में करना चाहिए, इतना बुरा मालूम पड़ता है कि किसी भलेमानुस के लिये तो गुजरना भी मुश्किल हो जाता है। बंगाल में भी लगभग यही हाल है। उसी तालाब में वे आबदस्त लेते हैं, उसी में उनके मवेशी पानी पीते हैं, और उसी में से घड़े भर-भरकर वे घर के काम के लिये पानी ले जाते हैं।"

यदि राजनैतिक रंग से जुदा कर, इन बातों पर विचार किया जाय, तो प्रत्येक भारतीय को मिस मेयो की इन बातों से शिक्षा लेनी चाहिए!

इस अध्याय का अंत मिस मेयो ने एक विचित्र घटना लिखकर किया है—"अँगरेजी पढ़ लेना उतना मुश्किल नहीं जितना जातीय स्वभावों से पीछा छुड़ाना। भारतवर्ष में ऐसे आदमी मिलेंगे, जो अँगरेज़ों को मात कर देनेवाली अँगरेज़ी बोलते होंगे, लिबास भी नख से सिर तक अँगरेज़ों का ही होगा, परंतु वे ऐसे गाँव के रहनेवाले होंगे, जहाँ कुआँ खोदने की ज़मीन को चुनने के लिये, वैज्ञानिक उपायों के अवलंबन करने की जगह बकरे पर एक बालटी-भर पानी डालकर स्थान का निर्णय किया जाता होगा। पानी डालने से बकरा भागता है, लोग उसके पीछे भागते हैं। जहाँ बकरा पहले खड़ा होकर बदन को झाड़ता है, बस, वहीं कुआँ खोदा जाता

है, चाहे वह जगह बाज़ार के ठीक बीच में ही क्यों न हो।"

मिस मेयो को विश्वास दिलाया जा सकता है कि कुएँ खोदने के उक्त प्रकार का वर्णन 'चुटकले' का मतलब ही हल करता है ! क्या वह बतला सकती है कि ऐसे कितने कुएँ खुदे ?

सत्ताईसवाँ अध्याय है—'The World-Menace'—'संसार के लिये ख़तरा'—कौन है ? भारतवर्ष ! मिस मेयो कहती है कि भारतवर्ष न्यूयार्क से कुल एक महीने का रास्ता है, इसलिये भारत में दिनोंदिन फैलनेवाली बीमारियों का अमेरिका तक को ख़तरा है। अंतर्जातीय विभाग में काम करनेवाले स्वास्थ्य-रक्षा के जानकार एक अमेरिकन ने मिस मेयो से कहा—

"Whenever India's real condition becomes known all the civilized countries of the world will turn to the League of Nations and demand protection against her."

"जब सभ्य संसार को भारत की असली हालत मालूम हो जायगी, तो सब देश राष्ट्र-संघ से दर्ख़्वास्त करेंगे कि हमें भारत से बचाओ !"

मिस मेयो को मालूम होना चाहिए कि घातक बीमारियों का भारतवर्ष की अपेक्षा योरप से ज्यादह खतरा है। सिफ़िलिस-जैसी भयंकर बीमारी का भारतवर्ष में कहीं पता तक न था। योरपियन लोग इस बीमारी को यहाँ लाए, इसीलिये इसका नाम संस्कृत में 'फिरंग रोग' है—अर्थात् फिरंगियों की बीमारी! चरक, सुश्रुत में तो इस बीमारी का जिक्र ही नहीं। पीछे के ग्रंथ 'भाव-प्रकाश' में जिक्र है और उसमें लिखा है—

> गंधरोगः फिरंगोऽयं जायते देहिनां ध्रुवम् ;
> फिरंगिणोऽङ्ग संसर्गात्फिरंगिण्याः प्रसंगतः ।

अर्थात्, "यह गंध-रोग फिरंगी मनुष्यों के संसर्ग से और फिरंग-देश की स्त्रियों के प्रसंग से होता है।" 'एन्साइक्लोपीडिया मैडिका' में सिफ़िलिस के विषय में लिखा है कि योरप में १४६४ ई० में यह रोग कोलंबस के नाविक अमेरिका से लाए और संपूर्ण योरप में इसे फैला दिया। इस समय यह अवस्था है कि जहाँ-जहाँ योरपियन लोग जाते हैं, वहाँ-वहाँ सिफ़िलिस भी पहुँचता है। तभी हैविलाक इलिस ने 'सिविलिज़ेशन' को 'सिफ़िलिज़ेशन' लिखा है! क्या "लीग ऑफ़ नेशंस" के सामने यह दरख्वास्त न करनी चाहिए कि फिरंग रोग फैलानेवाले फिरंगियों से संसार की रक्षा की जाय!

चरक तथा सुश्रुत में सिफ़िलिस, लेग, हैज़ा, इन्फ्लुएन्ज़ा, वार फ़ीवर, रेड फ़ीवर—किसी बीमारी का भी निशान नहीं मिलता। ये बीमारियाँ भारतवर्ष में बाहर से आई हैं, इसलिये मिस मेयो को 'लीग ऑफ़ नेशंस' के पास दरख्वास्त करने की ज़रूरत नहीं।

भारतवासी बीमारियों का कारण क्या समझते हैं? "ज़िले की सबसे उच्च स्थितिवाली महिला सिरहाने पर खड़ी डॉक्टरनी से कहती है—'मैं तुम्हें अपनी जीभ क्यों दिखलाऊँ जब कि दर्द नीचे कहीं जाकर पेट में है? और यदि मैं मुख खोलूँगी तो और बुरी आत्माएँ अंदर आ घुसेंगी।' ज़िले का ज़मींदार अपने दस दिन के बच्चे के कुछ ही दूर, जहाँ से वह पंजा न मार सके, बड़े भारी बंदर को बाँध देता है और फिर बंदर को दिक कर उसे गुस्सा दिलाता है ताकि वह बच्चे की तरफ़ मुँह बनाए और उससे डरकर बच्चे को सतानेवाला भूत भाग जाय। जब उच्च स्थिति के लोगों की यह अवस्था है तब गाँवों में रहनेवाले अशिक्षित देहातियों से क्या आशा की जा सकती है?"

परंतु यह भूत-प्रेत-लीला तो योरप में भारत से बढ़कर ही चली है। लंडन के प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो० विलियम क्रुक्स भूतों को, और जिनों को, मानते थे। इन भूत-प्रेत-

वादियों ने योरप में एक सोसाइटी क़ायम कर रक्खी है जिसका नाम Society for Psychical Research (परान्वेषण-परिषत्) रक्खा है। थियोसोफ़िकल सोसाइटी के सभी सदस्य, जिनकी संख्या योरप में बहुत काफ़ी है, भूत-प्रेत में विश्वास करते हैं। कहने का यह अभिप्राय नहीं कि भूत-प्रेत होते ही हैं, हमारा विश्वास तो है कि यह वहम है, परंतु यह तो निश्चित है कि यह बीमारी केवल भारतीयों को ही नहीं, अपितु इस बीमारी कहनेवाली मिस मेयो के देश-भाई भी इस रोग से पीड़ित हैं।

भारतीय 'वैद्यों' का वर्णन करने के लिये ('हकीमों' का जिक्र इस पुस्तक में नहीं है) एक अलग अध्याय लिखा गया है—'Quacks Whom We Know'—'नीम हकीम'! इसका प्रारंभ इस प्रकार किया गया है—

"ब्राह्मणों की एक कहावत है—चलने से बैठना भला, बैठने से लेटना भला, लेटने से सोना भला, और सबसे भला है—मर जाना !"

फिर 'सुश्रुत' की खिल्ली उड़ाई गई है। "सुश्रुत में लिखा है कि बीमार आदमी के दूत की शक्ल, उसके कपड़े, उसकी बातचीत, उस समय हवा की गति आदि को देखकर कहा जा सकता है कि बीमार बचेगा या नहीं !!!"

चरक और सुश्रुत की शल्य-चिकित्सा पर लिखा है—"एक वैद्य ने आयुर्वेदिक की पुस्तक सामने रखकर, एक ऑपरेशन करना शुरू किया। बीमार को नीचे दबाकर बिना मूर्च्छा की दवा सुँघाए, उसने चीरा दे डाला। चाकू अंदर चुभ गया, बीमार उछल पड़ा, उसकी नसें, पेट, आँतें सब कुछ कट गया। वह वैद्य शरीर-शास्त्र से अनभिज्ञ था। बीमार को निकटवर्ती डिस्पेंसरी में ले जाया गया। वहाँ एक मामूली-सा हिंदुस्तानी डॉक्टर था, वह इस बीभत्स-व्यापार को देखकर डर गया। उसने अपनी जान बचाने के लिये कहा, मैं तो छोटे-छोटे फोड़े-फुंसी के इलाज के लिये हूँ, इसे किसी हस्पताल में ले जाओ। हस्पताल पहुँचने से पहले-पहल ही बीमार मर गया।"

क्या मिस मेयो का मतलब यह है कि बिना अभ्यास किए यदि हैलीबर्टन की पुस्तक हाथ में लेकर कोई डॉक्टर आपरेशन करने लगेगा, तो उसकी हालत कुछ बेहतर होगी? चरक और सुश्रुत से ही तो योरप ने सीखा है! मदरास के भूतपूर्व-गवर्नर लॉर्ड एंपथिल ने कहा था—"I am not sure whether it is generally known that the science of medicine originated in India, but this is the case, and the science was first exported from India

to Arabia and thence to Europe." अर्थात्, "यह बात शायद लोगों को उतनी मालूम नहीं कि वैद्यक-शास्त्र की उत्पत्ति भारतवर्ष में हुई। यहाँ से अरब के लोगों ने सीखा और उनसे योरप ने!" सर डब्ल्यु हंटर ने लिखा है—"हिंदुओं का वैद्यक-शास्त्र स्वतंत्र रूप से बना। बग़दाद के ख़लीफ़ा ने ६५०-६६० ई० में चरक तथा सुश्रुत के आधार पर अरबी हिकमत की आधार-शिला रक्खी और १७वीं शताब्दी तक योरप के लोग अरब से ही वैद्यक सीखते रहे। अरबी ग्रंथों के लातीनी-अनुवादों में जगह-जगह 'चरक' का नाम आता है। कोलब्रुक ने लिखा है कि अरबियों ने 'चरक' का 'सरक', 'सुश्रुत' का 'सुस्रुद', 'निदान' का 'बदान', 'अष्टांग' का 'असंकर' बना दिया। आयुर्वेद के विषय में वीबर महोदय लिखते हैं—

"In surgery, too, the Indians seem to have attained a special proficiency, and in this department European surgeons might, perhaps, even at the present day, still learn something from them, as indeed they have already borrowed from them the operation of rhinoplasty."

"सर्जरी में भारतीयों ने पर्याप्त चातुर्य प्राप्त कर लिया था,

और इसमें योरप के सर्जन, आज भी, भारत की सर्जरी से बहुत कुछ सीख सकते हैं, जैसा कि नाक आदि के ऑपरेशन तथा नई नाक, कान बनाना उन्होंने भारतीयों से सीखा है।"

श्रीमती मैनिंग लिखती हैं—"The surgical instruments of the Hindus were sufficiently sharp, indeed, as to be capable of dividing a hair longitudinally."—"इनके सर्जरी के औज़ार इतने तेज़ होते थे कि उनसे बाल को भी लंबाई के रुख काट सकते थे।"

विंसेंट स्मिथ का कथन है कि योरप में १०वीं शताब्दी में सबसे पहला हस्पताल खुला, जिसमें सर्वसाधारण को दवाई दी जाती थी। इधर चीनी-यात्री फ़ाहियान लिखता है कि जिस समय वह भारत आया तो पाटलीपुत्र में औषधालय खुले हुए थे, जिनमें ग़रीब लोग आकर अपना इलाज कराते थे! क्या इसी साक्षी को सामने रखकर मिस मेयो ने चरक-सुश्रुत को 'नीम हकीम' लिखने की धृष्टता की है?

इस अध्याय में मिस मेयो ने महात्मा गांधी के जेल के ऑपरेशन का ज़िक्र किया है। वह लिखती है—

"हस्पताल के सर्जन ने कहा—'गांधीजी, मुझे आपको यह सूचना देते हुए बड़ा दुःख है कि आपको 'एपेंडीसाइटिस' रोग हो गया है। आप यदि मेरी दवा करते, तो मैं एक-

दम चीरा दे डालता। शायद आप तो अपने आयुर्वेदिक वैद्यों का इलाज कराना पसंद करेंगे।'

"परंतु मिस्टर गांधी के मन में यह खयाल न दिखाई दिया!

"सर्जन ने फिर कहना शुरू किया—'मैं तो ऑपरेशन न करना ही पसंद करूँगा, क्योंकि यदि मामला बिगड़ गया, तो आपके सब मित्र हमें दोषी ठहराएँगे, हालाँकि हमारा काम आपकी निगरानी करना ही है।'

"मिस्टर गांधी ने डॉक्टर को मनाते हुए कहा—'यदि आप चीरा देना मान जायँ, तो मैं अपने सब मित्रों को बुलाकर समझा दूँगा कि यह काम मेरी प्रार्थना पर ही किया गया है'।"

मिस मेयो के इस लेख का महात्मा गांधी ने प्रतिवाद किया है! उनका कहना है कि ऐसी कोई बातचीत नहीं हुई!!

३०वाँ अध्याय 'मदर-इंडिया' का अंतिम अध्याय है। इसमें भी चलते-चलते दो चुटकले छोड़े गए हैं—

"भारत में १६२६ में ४८ लाख साधु थे। सड़कों पर बिलकुल नंगे बदन, राख लगाए, जटाओं को सन की तरह लपेटे, दवाओं से आँखों को लाल किए वे सर्वत्र दिखाई देते हैं!"

दूसरा चित्र खूब खींचा है—"वे लोग नहीं चाहते कि साधारण जनता अक्षर पढ़े। अक्षर पढ़ने से तो गाँववाले

बनिए का लिखा पढ़ लेंगे ! फिर वे २००) रु० लेकर ५००) पर अँगूठा क्योंकर लगाने लगे ! बनिए से एक बार क़र्ज़ लेने पर फिर कोई उनके चंगुल से निकलता नहीं है, मकड़ी के जाले में मक्खी की तरह देहाती फँसता ही चला जाता है। ब्याज पर चक्र-ब्याज चढ़ता जाता है और क़र्ज़ के थोड़े-से रुपयों का बोझ तीसरी या चौथी पीढ़ी तक दम नहीं लेने देता !"

काश कि हमारे बनिए, छाती पर हाथ रखकर, परमात्म-देव को साक्षी समझकर, कह सकें कि मिस मेयो ने ये वाक्य झूठ लिखे हैं !!

बस, यहाँ मिस मेयो की पुस्तक समाप्त हो जाती है !

परिशिष्ट

१. अमेरिका में पाप की परा काष्ठा !

डॉ० सुधींद्र बोस अमेरिका की आयोआ यूनिवर्सिटी में अध्यापक हैं। आपने २ फर्वरी १९२६ के 'मॉडर्न रिव्यू' में अमेरिका की अवस्था का वर्णन करते हुए लिखा है—

"अमेरिका के समाचार-पत्र यह रोना रोया करते हैं कि एशियाई लोग वहाँ अधिक संख्या में जाने लगेंगे, तो उनके स्वर्ग का खातमा हो जायगा। उनका कहना है कि एशिया के लोग अमेरिकन सभ्यता के लिये, जो कि कमल-पत्र की तरह शुभ्र तथा निर्मल है, खतरे का कारण हैं। 'खतरा'—'खतरा' चिल्लानेवाले ये सभ्यता के ठेकेदार एशिया के पतन तथा पापों का घृणित चित्र खींचकर अपने देश-भाइयों को चेतावनी दिया करते हैं—'इन एशियाई भूतों से अपने देश को बचाओ !' यह रोग संपूर्ण अमेरिका में फैलता चला जा रहा है। परंतु, 'पतित'-एशियाइयों को देखकर नख-से-शिख तक काँपने के बजाय, अच्छा हो यदि अमेरिका अपने नैतिक पतन पर, आठ-आठ आँसू बहाए। थोड़े दिन हुए, एक अमे-

रिकन राजनीतिज्ञ ने अमेरिका को, संसार के सब देशों में सब से ज्यादा पाप की तरफ़ झुका हुआ देश कहा था!

पैशाचिक पापों की घृणित कहानियाँ यहाँ रोज़ अख़बारों में छपा करती हैं। एक स्त्री ने अपने पति को विष दे दिया। अब एक बीमा कंपनी से ३० हजार रुपया जो कि उसके नाम पर बीमा कराया गया था वसूल करने में लगी है। बीमा इस शर्त पर था कि यदि पति शांति-पूर्वक बिस्तर पर मरेगा, तो उसकी स्त्री को १५ हजार रु० मिलेगा, यदि बल-प्रयोग से मारा जायगा, तो स्त्री को ३० हजार मिलेगा। जूरियों की राय में मृत्यु में बल-प्रयोग हुआ था!

आयोवा रियासत में एक माता ने अपने १५ दिन के बच्चे के गले तथा हाथ की कलाई को उस्तरे से इसलिये काट डाला, क्योंकि वह चिल्लाता बहुत था और उसे दिक करता था!

मैसाचुसेट के मैदान में एक सार्वजनिक सभा हो रही थी। कुछ नागरिकों ने सभा भंग करना चाहा। भयंकर युद्ध छिड़ गया, सैंकड़ों ने हिस्सा लिया। ईंट, पत्थर, अंडे—जो कुछ हाथ आया चलाया गया। पुलिस की नाक में भी दम कर दिया। थानेदार को पिस्तौल, हथकड़ी, सब छीन लिया। पुलिस की छाती पर बंदूकें रखकर यह कांड हुआ!

शिकागो के दो उच्च-कक्षा के विद्यार्थी, जो धनी घरानों के

थे, दिल में यह सोचकर चल दिए कि कोई महाघोर पाप करें! एक छोटे बच्चे को फुसलाकर उन्होंने अपनी मोटर में बिठा लिया, हथौड़ी से उसका सिर फोड़ डाला, भेजा निकाल दिया और एक नाली में लाश फेंककर चंपत हुए!

ओहियो में एक महिला ने अपने ६ हफ़्ते के बच्चे को टब में पानी भरकर अंदर डाल दिया, नीचे से आग जला दी। कई घंटों के बाद उसके पति ने देखा कि बच्चा उबलकर मर चुका था!

दक्षिणी डेकोटा के एक बैंक में दो स्त्रियाँ मोटर पर चढ़कर पहुँचीं। एक ने खज़ानची की छाती पर पिस्तौल तानी; दूसरी ने रुपए बटोरे! बुढ़िया ने कहा—'हिले नहीं, और गए नहीं; मुझे जान से मारना पसंद नहीं, पर तुम हिले तो देखना!' बैंक का सफ़ाया कर दोनों स्त्री-डाकू मोटर में सवार हुए और चल दिए।

न्यूयार्क के एक आदमी ने एक स्त्री का सिर हथौड़े से इसलिये फोड़ दिया, क्योंकि वह बेचारी अपने पति को छोड़कर इसके साथ नहीं आती थी! उसने उसे मूर्च्छितावस्था में घसीटकर तहख़ाने की भट्ठी में ला फेंका। भट्ठी का दरवाज़ा बंद कर कुदाली साथ खड़ा कर दिया, ताकि दरवाज़ा खुल न जाय। वह देवी चीत्कार करती हुई आग में

भुन गई, राख हो गई। ऐसे क्रूर कर्म जिस देश में हो सकते हों, वह दूसरों को उपदेश देने का दम भरे !

ये घटनाएँ रोमांचकारी हैं ! ये बतलाती हैं कि हवा का रुख किधर है ! अमेरिकन लोग अपनी सभ्यता के गीत गाते-गाते नहीं थकते, परंतु उन्हीं के देश में संसार के पापों की पराकाष्ठा पहुँच चुकी है। न्यूयार्क के जज अलफ्रेड टैली महोदय ने कहा था, इस देश पर पाप का भूत सवार हो गया है, तभी वह संसार के सभी देशों से ज्यादा शासन-हीन (Lawless) है ! इँगलैंड, फ्रांस, इटली, जापान— संसार के किसी भी देश में इतना पाप, इतना दुराचार नहीं होता, जितना, जन-संख्या की दृष्टि से, इस देश में ! चोर, डाकू, लुटेरे जगह-जगह हैं। इस देश में बंदूक़ इतनी प्रचलित है, जितनी तंबाकू की पाइप, या घरों में स्त्रियों के मुख पर लगाने का पाउडर। अमेरिकन लोग पिस्तौल लेकर निकलते हैं, ताकि कहीं रास्ते में कोई लुटेरा उनकी छाती पर न चढ़ बैठे। अमेरिका में शिकागो सबसे बड़ा शहर है, इसकी संसार के बड़े-बड़े शहरों में दूसरी संख्या है। इस शहर में, हत्याओं की संख्या रोजाना एक से कुछ ज्यादा ही है। १९२५ में, साल में, केवल एक न्यूयार्क शहर में ३४७ हत्याएँ हुईं; १९२४ में २७० ! ईसाइयत

के इस युग में शिकागो पाप की राजधानी बना हुआ है !

अमेरिका में पिछले २५ साल से पाप की लहर नहीं, पाप का तूफ़ान उमड़ रहा है। डॉ० फ्रेडरिक हाफ़मेन के कथनानुसार, जो इस विषय के पंडित हैं, पिछले २४ साल में हत्याओं की संख्या दुगुनी हो गई है। १६१४ के महायुद्ध में ४० हज़ार अमेरिकन मरे, परंतु युद्ध के बाद से १६२५ तक अमेरिका में जो हत्याएँ हुईं, उनकी ही संख्या ४० हज़ार से कहीं ज्यादा है। अमेरिका में ११ हज़ार पैशाचिक वध प्रति वर्ष होते हैं। पिछले १५ सालों में यहाँ हत्या की चाल प्रति-सहस्र १०० या ८० रही है, जब कि जापान, ग्रेटब्रिटन, आयर्लैंड, हॉलैंड, स्विटज़रलैंड और नारवे में हत्याओं की संख्या ३ से ९ प्रति-लाख रही है ! डॉ० हाफ़मैन का कथन है कि अमेरिका में वह समय आ गया है, जब कोई भी, कहीं भी, कभी, सुरक्षित नहीं ! हत्याएँ पैशाचिक क्रूरता से की जाती हैं, उनमें सारी अक़्ल ख़र्च कर दी जाती है, देश के शासक इन्हें रोक नहीं सकते ! अमेरिका की सभ्यता की उन्नति पर यह क्या ही अच्छी टीका है !!

एसोशियेटेड प्रेस की हाल ही की रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि केवल मोटर से अमेरिका में प्रति दिन, प्रतिघंटा, दो

से ज्यादा जानें जाती हैं। १९२३ की रिपोर्ट से मालूम होता है कि अमेरिका में, एक लाख में १४.८ की मृत्यु मोटर-दुर्घटना से हुई, जहाँ कि इंगलैंड तथा वेल्स में ५.३, स्कौटलैंड में ४.३ न्यूजीलैंड में ४.६ और कैनेडा में ३.६ हुई। १९२४ की रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि अमेरिका के १४८ शहरों में १ लाख में १६.४ की मोटरों से मृत्यु हुई—अर्थात् इस साल मोटरों से ही १७,४०० की मृत्यु हुई। मोटर को तेज चलाने में मजा आता है वह भला अपने जैसे इन्सान की जिंदगी की परवाह करने पर कहाँ मिल सकता है? केवल न्यूयार्क में ही प्रति वर्ष ३०० बच्चे मोटरों के नीचे रुँध जाते हैं, शिकागो में २५०—इन दो शहरों, में हा ५५० बच्चे प्रति वर्ष मोटरों के नीचे कुचले जाते हैं। इस हिसाब से अमेरिका में ७००० बच्चे मोटरों की दुर्घटनाओं का शिकार बनते होंगे! 'नेशन' पत्र का संवाददाता लिखता है कि यदि टर्क लोग प्रति वर्ष ७००० इसाई-बच्चों को इस प्रकार क़त्ल कर दिया करें, तो भी क्या हमारा खून इसी प्रकार ठंडा पड़ा रहे ?

अमेरिका में चोरी, डाके से संपत्ति का जो नुक़सान होता है वह भी साधारण नहीं है। लड़के-लड़कियाँ रिवाल्वर लेकर गाड़ियों को खड़ा कर लेती हैं।

गाड़ी को लूटना इतना बढ़ गया है कि पिछले दो सालों से पोस्ट आफ़िसों ने रजिस्टर्ड-मेल को रात की गाड़ी से भेजना ही बंद कर दिया है। दिन को भी स्टेशन पर डाक पहुँचानेवाली गाड़ियों पर बंदूक़ों का पहरा रहता है। पिछले अक्तूबर से बोस्टन का बड़ा पोस्ट आफ़िस और उस शहर के छोटे-छोटे ८३ आफ़िस क़िले के ढंग पर बनाए गए हैं, जिन पर कड़ा पहरा रहता है। पोस्ट आफ़िस की रसीदों को लोहे की गाड़ियों में ले जाया जाता है जिनके साथ चार-चार बंदूक़ची जाते हैं। खुली हुई बारी पर काम करनेवाले डाकख़ाने के प्रत्येक क्लर्क के पास पिस्तौल रहती है—यह बोस्टन का हाल है!

१६२५ में सिर्फ़ शिकागो तथा न्यूयार्क, दो शहरों में ही ब्रिटिश कनाडा की अपेक्षा ६गुना आदमी लुटे थे। विलियम बर्न्स का कथन है कि रेल आदि की चोरी प्रति वर्ष ३० करोड़ से कुछ ज्यादह होती है। 'अमेरिकन बैंकर्स एसोसिएशन' के हिसाब से उन्हीं के अपने आदमियों में से ४५५ चोर थे, जिनके कारण उन्हें ३६,७३,४६७ रु० का घाटा उठाना पड़ा। इसका यह अभिप्राय है कि वर्ष के हर-एक दिन बैंक के आदमियों में से दो एक से ज्यादह चोर पकड़े जाते हैं; दूसरे आदमी जो बैंक को धोखा दे जाते हैं उनकी गिनती ही नहीं।

क्या यही अमेरिका है ? क्या लुटेरापन अमेरिका के जातीय स्वभाव का अंग बन गया है ?

अमेरिका के एक प्रसिद्ध पत्र 'बिज़िनेस' में एडवर्ड एच्० स्मिथ महोदय लिखते हैं कि अमेरिका में ३० अरब रुपया प्रति वर्ष चोरी, डाका, धोखा, दिवाला आदि में जाति को खोना पड़ता है। यह संख्या १६२३ के अमेरिका के जातीय बजट से तिगुनी है, उस वर्ष की जाति की साधारण आमदनी से अढ़ाईगुनी है, आर्मी तथा नेवी के वार्षिक खर्च से बारह-गुनी है। यदि सारे देश की आमदनी ६०-७० खर्व समझी जाय तो उसका ६ठा या ७वाँ हिस्सा है। अमेरिका में 'बोर्ड ऑफ़ ट्रेड' के नाम से साल में ६ अरब रुपया ठगा जाता है; साढ़े ३७ करोड़ गबन होता है; १ अरब साढ़े सत्तावन करोड़ सेंध लगाकर, ३० करोड़ जाली दस्तखतों से; १ अरब ३० करोड़ झूठे दिवाले निकालकर; ४५ करोड़ वसूल न होनेवाले रुपए के तौर पर; ३० करोड़ जाली हुंडियों से; ६० करोड़ सरकारी चोरी से जाति का रुपया सीधा चला जाता है। इस अनर्थ को रोकने के लिये पुलिस आदि का खर्च ३ अरब प्रति वर्ष है। इसके साथ ही कोर्ट, जेल, पागल-खाने आदि का खर्च भी जोड़ना चाहिए। पाप के परखैयों का विचार है कि अमेरिका में एक से डेढ़ प्रतिशतक तक

जाति में अपराधी लोग हैं। अमेरिका में २ लाख आदमी जेलखानों में हैं। ये दो लाख, असली अपराधियों का ५वाँ हिस्सा हैं। कुल १० लाख के लगभग हुए! ये सब लोग मिलकर जाति का जितना रुपया नष्ट करते हैं उसी का हिसाब ३० अरब कूता गया है।

कई पाषाण-हृदय अमेरिका, नीग्रो लोगों को जीते-जी जला देते हैं, इसे लिंचिंग (Lynching) कहते हैं। १८८५ से १६१८ तक २६७७ नीग्रो लोगों को इस प्रकार जलाया जा चुका है। इन लोगों को विना किसी अदालत के सामने लाए जनता ने ही अपने उन्माद में जलाया है। इनकी तालिका ला० लाजपतराय ने निम्न-लिखित दी है—

सन्	संख्या	सन्	संख्या
१८८५	७८	१८६३	१५४
१८८६	७१	१८६४	१३४
१८८७	८०	१८६५	११२
१८८८	६५	१८६६	८०
१८८६	६५	१८६७	१२२
१८६०	६०	१८६८	१०२
१८६१	१२१	१८६६	८४
१८६२	१५	१६००	१०७

सन्	संख्या	सन्	संख्या
१६०१	१०७	१६१०	६५
१६०२	८६	१६११	६३
१६०३	८६	१६१२	६३
१६०४	८३	१६१३	७६
१६०५	६१	१६१४	६६
१६०६	६४	१६१५	८०
१६०७	६०	१६१६	५५
१६०८	६३	१६१७	४४
१६०६	७३	१६१८	६४

१६१६ से ३० साल पहले तक, जीवित-दाह की संख्या १०७ नीग्रो प्रति वर्ष रही है। १६२० से १६२४ तक, पिछले ५ साल में २३४ नीग्रो को जीते-जी जलाया गया है। चार रियासतों को छोड़कर अमेरिकन 'राष्ट्र-संघ' में पिछले ४० वर्षों से हर-एक रियासत में यह घृणित कार्य होता है! मानव-शरीर को अग्निसात् करने के साथ-साथ अन्य पाशविक अत्याचार भी किए जाते हैं। चेटनूगा शहर के 'डेला टाइम्स' (१३ फर्वरी, १६१८) में से जीवित-दाह का निम्न वर्णन कितना दिल दहला देनेवाला है—

"जिम मैकलहार्न नीग्रो को लबादा पहने हुए (Masked

'महारानी' कहलाती है। इसकी अध्यक्षता में ही सब क्रूर कर्म होते हैं। संस्था में अमेरिका के ऊँचे-से-ऊँचे पदाधिकारी गुप-चुप शामिल हैं। ४ लाख के लगभग इनके सदस्य हैं जिनमें डेढ़ लाख के क़रीब स्त्रियाँ हैं।

आतंक तथा उच्छृंखलता का ऐसा राज्य उस देश में दिखाई दे रहा है जो ईसाइयत की उच्च सभ्यता के अभिमान से सिर ऊँचा करने का साहस करता है; जहाँ की मिस मेयो है!

---

२. सभ्य संसार में 'अछूत'!

इसमें संदेह नहीं कि अपने भाइयों को ही 'अछूत' कहनेवाले संसार में अकेले हमीं हैं। इसका प्रायश्चित्त हमें भोगना पड़ रहा है, और जब तक इस कलंक को हम दूर नहीं कर लेते, तब तक ईश्वरीयन्याय में हम दंड भोगते रहेंगे। परंतु मनुष्य को 'अछूत' समझने का पाप संपूर्ण श्वेतांग-संसार में हो रहा है। गोरी जातियों ने काली जातियों के साथ क्या बर्ताव किया और कर रही है, यह संसार के इतिहास में सबसे काला पन्ना है। नीग्रो लोगों के साथ अमेरिका में क्या-क्या अत्याचार नहीं होते रहे? श्वेतांग लोग कहते रहे कि नीग्रो में आत्मा नहीं होती, यह मिर्चों का नज़दीकी रिश्तेदार है! नीग्रो को बेचा जाता रहा, नीलाम किया गया। आज, अब

कि इस जाति में बड़े-बड़े डॉक्टर, बैरिस्टर, व्यापारी भी हो गए हैं, उनके कई विश्वविद्यालय खुल गए हैं और कई जहाज चलते हैं, अमेरिका के ७२ प्रतिशतक नीग्रो लिख-पढ़ सकते हैं, आज उनके साथ अमेरिका का सभ्य संसार क्या बर्ताव कर रहा है ? अभी जीवित-दाह का हृदय-वेधी वर्णन दिया जा चुका है ! अमेरिका में इस समय नीग्रो के लिये अलग होटल बने हुए हैं, अलग गाड़ियाँ हैं, जिन पर लिखा है, 'केवल नीग्रो के लिये', अलग शिक्षणालय हैं ! जून, १९२६ के 'मॉडर्न रिव्यू' में 'The World To-morrow' में से निम्न-उद्धरण दिए गए हैं—

"हाल ही में 'क्रिश्चियन हैरल्ड' का विज्ञापन देखकर पैलस्टाइन में पादरी का काम करने के लिये एक प्रार्थना-पत्र आया। प्रार्थी को न्यूयार्क बुला लिया गया। उसके वहाँ पहुँचने पर मालूम हुआ कि वह काला आदमी (नीग्रो) है। उसे वापिसी का ख़र्च देकर लौटा दिया गया।

"एक विज्ञापन छपा—'आवश्यकता है—फ़ैक्टरी में काम करनेवालों की। केवल अनुभवी लोग दरख़्वास्त दें। श्वेतांग को २४ डालर, काले को २० डालर प्रति सप्ताह।'

"दंत-वैद्यों का एक सम्मेलन होना था। सम्मेलन के कुछ दिन पहले काले दंत-वैद्यों को उनके हमपेशा श्वेतांग वैद्यों

ने कहला भेजा कि यदि वे सीढ़ियों पर बैठना पसंद करें, तो बड़ी ख़ुशी से सम्मेलन में आ सकते हैं।

"साउथ करोलिना में एक श्वेतांग ने एक मोटर चुरा ली, उसे ३० दिन की क़ैद दी गई; उसी दिन उसी जज ने एक नीग्रो को साइकिल चुराने के अपराध में ३ वर्ष का कठोर कारावास दिया!

"एक शिक्षित नीग्रो फ्रांस के विश्वव्यापी युद्ध में 'मनुष्यों के अधिकारों' के लिये जान को हथेली पर रखकर लड़ा। लौटकर आने पर वह सिविल सर्विस के इम्तिहान में बैठा। उसके नंबर ६८.५ प्रतिशतक आए; सबसे पहला रहा। नौकरी के लिये जब वह दफ़्तर में गया, तो वहाँ कार्य करनेवाली स्त्री उसे देखकर दाँतों-तले जीभ दबाने लगी, क्योंकि वह तो काला आदमी निकला! उसे नौकरी नहीं दी गई, एक दूसरा श्वेतांग, जो ७५ प्रतिशतक से पास हुआ था, भर्ती कर लिया गया!

"नीग्रो-कॉलेज की एक नीग्रो-अध्यापिका शहर से बाहर एक रात अपने भाई के यहाँ गई। उसका भाई बड़ा कृतकार्य ज़मींदार था। उसकी रूई की फ़सल को देखकर गोरे ज़मींदारों की छाती पर साँप लोट गया। वे उसकी फ़सल को आग लगाने की सोचने लगे। इसी रात को भाई-बहन ने घर के

बाहर कुछ आवाजें सुनीं । भाई बाहर गया ; इतने में बहन को गोली की आवाज सुनाई दी । उसने बाहर जाकर देखा, तो उसका भाई मरा पड़ा था । वह अपने भाई के पास खड़ी ही थी कि *गोरों में से कुछ ने चिल्लाकर कहा—* 'इसे भी साफ कर चलो !' थानेदार ने आगे बढ़कर उसे बचा लिया और वह अकेली भाई को गाड़ी में रखकर शहर में ले गई ।

"एक श्वेतांग लड़की पर आक्रमण करने के अपराध में एक नीग्रो को डेलावेर में फाँसी दी गई । अलाबामा में दो *गोरों ने काली लड़की पर हमला किया—एक-एक को २५०* डालर जुर्माना करके छोड़ दिया गया ।

"गल्फ-स्टेट की एक अध्यापिका कॉलेज में पढ़ाती थी । उसने नीग्रो-विद्यार्थियों की कान्फ्रेंस में भाग लिया, उनके साथ भोजन भी किया । नतीजा यह हुआ कि उसे त्याग-पत्र देना पड़ा । उसने *त्याग-पत्र देते हुए कहा कि कान्फ्रेंस का इतना* मूल्य था कि उसके लिये त्याग-पत्र कुछ चीज ही नहीं ।"

श्वेतांग लोगों के व्यवहार को देखकर नीग्रो-जाति का हृदय विक्षुब्ध है । उसमें क्या-क्या उभार आ रहे हैं, इसका चित्र एक नीग्रो ने ही खींचा है । इनका नाम है 'बरगार्डडू बोयस' । '*Dark Water*'-नामक पुस्तक के

'The Soul of White Folk' अध्याय में ये नीग्रो लिखते हैं—

"मैं अपनी छत पर बैठा मानव-जाति के समुद्र को थपेड़े मारते हुए देख रहा हूँ। कई आत्माएँ दिखाई दे रही हैं; वे आती हैं, जाती हैं, घुमरघेरी में चक्कर काटती हैं, परंतु मेरी टिकटिकी श्वेतांग महाप्रभु की आत्मा पर गड़ी हुई है।

"श्वेतांगों की आत्माओं का मुझे पर्दा-पर्दा दिखाई दे रहा है। मैं इन आत्माओं का चोला उतारकर, उलट-फेरकर, उन्हें आगे-पीछे से देख रहा हूँ। उनके पेट में जो बात छिपी है, वह भी मुझे दिखाई दे रही है। मैं उनके एक-एक मनोभाव को पढ़ रहा हूँ; उन्हें भी मालूम है कि मुझे उनका सब हाल ज्ञात है—इसीलिये तो वे कभी घबड़ा उठते हैं, कभी क्रोध में उबल पड़ते हैं। वे कह रहे हैं, मुझे जीने का कोई अधिकार नहीं; उनके शब्दों में मैं सृष्टि का कलंक हूँ! मैं उन पर खीझ-खीझकर रह जाता हूँ, मेरी आत्मा में निराशा छा जाती है। वे आगे-पीछे भटकते हैं, चिल्लाते हैं, धमकाते हैं, उपदेश देते हैं, सच्चाई को छिपाकर अपनी आत्मा के गंदेपन को छिपाना चाहते हैं, परंतु मैं उनके सब पर्दों को उतार-उतारकर देख रहा हूँ—ओहो, वे संख्या में कितने हैं, और मनुष्य होते हुए भी कितने कुत्सित और पतित हैं!

"परमात्मा के दिए सब रंगों में गोरा रंग ही सर्वोत्कृष्ट है, यह विचार हरएक गोरे रंगवाले के मस्तिष्क में अमिट छाप की तरह मुद्रित है। इसके नतीजे अजीब-अजीब दिखाई दे रहे हैं। गोरों में से वे लोग, जिनके हृदय में कुछ मिठास है, जब मेरे साथ साधारण विषय पर भी बातचीत कर रहे होते हैं, तो उनकी भी आवाज में मानो ये शब्द गूँजते हैं—'ओह, बेचारी काली चीज ! तू आँसू मत बहा, क्रोध में मत जल ; मैं खूब जानता हूँ कि परमात्मा का कहर तुझ पर पड़ा है। मैं नहीं जानता, क्यों, परंतु मैं इतना जरूर जानता हूँ कि यह बात ठीक है ! परंतु देख, हिम्मत मत हार ! इस पतितावस्था में ही अपना काम किए जा, और परमात्मा से हाथ जोड़कर प्रार्थना कर, क्योंकि वह तो प्रेम का भंडार है, कि एक दिन वह तुझे भी किसी जन्म में गोरा-रंग बख्शे !' मैं यह सुनकर हँसता नहीं, परंतु मैं सीधे शब्दों में पूछता हूँ—'गोरेपन में क्या धरा है कि मैं उसके लिये दुआ करूँ ?' यह प्रश्न करते हुए ही, किसी-न-किसी प्रकार, बिना बोले किंतु स्पष्ट, मुझे उत्तर दिया जाता है—'गोरेपन का मतलब है पृथ्वी का सदा—सर्वदा स्वामित्व ! एकाधिकार ! अखंड, निरबाध शासन ! आमीन' !!"

साउथ-आफ्रिका में भारतीयों के साथ वहाँ के श्वेतांगों

का क्या बर्ताव है ? बिशप फ़िशर ने इस बर्ताव का वर्णन करते हुए लिखा था—

"ट्रांसवाल शहर में बिना लाइसेंस लिए कोई हिंदुस्तानी रेल-गाड़ी पर भी नहीं चढ़ सकता। यह लाइसेंस देना एक गोरे आदमी के हाथ में है। उसे यह अधिकार होता है कि जिस हिंदुस्तानी की दुकान को चाहे शहर के एक हिस्से से उठवाकर दूसरे हिस्से में ले जाने का हुक्म दे दे। वहाँ हिंदुस्तानी पक्का मकान नहीं बनवा सकते, क्योंकि उन्हें जब-कभी जगह छोड़ने को कहा जा सकता है। ट्रांसवाल के एक गंदे हिस्से में सब भारतीयों के लिये अलग स्थान कर दिया गया है। उन्हें वहीं रहना होगा, परंतु वहाँ पर भी उन्हें स्थिर जायदाद बनाने का कोई अधिकार न होगा। यदि कोई वहाँ पर भी पक्का मकान बना लेगा, तो उसे दो वर्ष बाद भी जगह छोड़ने पर बाधित किया जा सकता है। प्राचीन रूस में, जो हालत यहूदियों की थी, वही हालत आज भारतवासियों की ट्रांसवाल में है। ट्राम-गाड़ी में जाते हुए भी इसी प्रकार के अमानुषिक नियम दिखाई देते हैं। सारी ट्राम-गाड़ी में केवल तीन हिंदुस्तानी बैठ सकते हैं। भारत की देवियाँ गोद में बच्चा लिये ट्राम पर चढ़कर यदि देखें कि उन तीन स्थानों में से कोई खाली नहीं है, तो सारी ट्राम के सुनसान पड़े रहने पर

भी वे गाड़ी में बैठ नहीं सकतीं, उन्हें नीचे उतर जाना पड़ता है। सब हिंदुस्तानी 'कुली' कहाते हैं। स्कूलों में पढ़ाई जानेवाली पुस्तकों में साफ़-साफ़ लिखा है कि हिंदुस्तानी 'कुली' हैं। कैंब्रिज में पढ़ा हुआ भारतीय जब ट्राम में चढ़ा जा रहा होता है तो निरक्षर, मूर्ख गोरा उसे 'कुली' कहकर पुकारता है। हिंदुस्तानी लोग नाटकों में नहीं जा सकते, जिन पुस्तकालयों तथा वाचनालयों के लिये उन्होंने चंदा दिया होता है, उनमें भी प्रविष्ट नहीं हो सकते। होटलों में वे खानसामों की हैसियत में ही जा सकते हैं। जिस होटल में मैं ठहरा हुआ था उसमें कुछ हिंदुस्तानी मुझे मिलने आए। वे इँगलैंड के विश्वविद्यालयों के ग्रेजुएट थे, धनी थे, वे मोटरें भी रखते थे, परंतु वे मुझे मिलने होटल के अंदर न आ सकते थे, उन्हें मिलने के लिये मुझे होटल के बाहर जाना पड़ा। आफ़्रीका के गोरे साफ़ शब्दों में कहते हैं कि हिंदुस्तानी हम सबसे दिमाग़ में बढ़कर हैं, आचार में ऊँचे हैं; परंतु इन बातों के होते हुए भी आफ़्रीका में हिंदुस्तानी अछूत बने हुए हैं।"

---

३. 'सभ्यता' या 'दुराचार' ?

कहा जाता है कि अमेरिका ने शराब का सर्वथा बहिष्कार

करके सभ्य संसार के सम्मुख आदर्श स्थापित किया है। परंतु अमेरिका में शराब का क़ानूनन निषेध होने पर भी १६२४ में ३८॥ प्रतिशतक अमेरिका शराब में गोते लगा रहा था। २३ फ़र्वरी, १६२४ के 'लिटररी डाइजेस्ट' से ज्ञात होता है कि शराब को देश में आने से रोकने के लिये ४००० सरकारी कर्मचारी थे, परंतु ४३ पर रिश्वत लेकर शराब लाने देने का दोष लगाया गया, जिनमें से २३ पर दोष सिद्ध भी हो गया। 'प्रोहिबिशन कमिश्नर' मि० हेनीज़ का कथन था कि यह संख्या साधारण है, परंतु इस पर मि० फ़ौक ने कहा, यदि ४३ पर रिश्वत लेकर शराब लाने देने का दोष लगा है तो कितने ही अफ़सर ऐसे होंगे जो अपनी चालाकी से पकड़ में नहीं आए होंगे! उनकी संख्या, पकड़े जानेवालों की संख्या से, अवश्य अधिक होगी। श्रीमती मेबल वाकर विलब्रैंड ने इस संबंध में जो जाँच की, उसके अनुसार तिहाई से ज्यादह अमेरिका अभी शराब में डूबा हुआ है। कैलीफोर्निया में कई स्थानों पर ८५ प्रतिशतक; ओरेगन, वाशिंगटन, मौन्टाना, नौर्थ डैकोटा, मिनेसोटा और मिचिगन में ५० प्रतिशतक; ज्योजिया में ६० प्रतिशतक; फ़्लोरिडा में ७५ प्रति शतक; लूसियाना में ६० प्र० श०; न्यूयार्क में ९५ प्र० श० शराब 'बहिष्कार' के बाद भी चल रही है! न्यूयार्क

से ५ दिसंबर, १६२७ का तार अभी समाचार पत्रों में छपा है कि शराब न पीने के क़ानून का भंग करने के अपराध में ८४ लाख पौंड जुर्माने के तौर से वसूल हुआ है। जब से शराब पीना बंद हुआ है, तब से २२,२३,००० आदमियों को इस अपराध में पकड़े जाने के कारण दंड मिला है। क्या इसी का नाम शराब का बहिष्कार है ? क्या यही अमेरिका की विशाल सभ्यता है ?

न्यूयार्क के 'हेरॉल्ड ट्रिब्यून' में १९२४ में रिचमंड पीयरसन हौब्सन महोदय लिखते हैं कि सारे पश्चिमी योरप में इतनी हत्याएँ नहीं होतीं, जितनी अमेरिका के केवल एक शहर में ! कारण क्या है ? उनका कथन है कि पिछले १० साल से अमेरिका में हीरोयन (Heroin)-नामक नशे का, जो अफ़ीम से बनता है, प्रचार दिनोंदिन बढ़ रहा है, इसीलिये निकृष्टतम पापों की संख्या भी अमेरिका में बढ़ती चली जा रही है। इस नशे का औषध-रूप से ही क़ानूनन उपयोग हो सकता है, परंतु न्यूयार्क में ७६,००० औंस हीरोयन खर्च हुई, जिसमें केवल ५२ औंस डॉक्टरों ने खर्च की थी, बाक़ी नशे-खोरों ने ! अमेरिका में १० लाख युवक जिनकी आयु २३ वर्ष से कम है, इसका इस्तेमाल चोरी-चोरी कर रहे हैं।

नवंबर, १९२७ के 'मॉडर्न रिव्यू' में इसी न्यूयार्क 'हेरल्ड-

ट्रिब्यून' में से निम्न उद्धरण लिया गया है—"When over 1200 young people between the ages of 15 and 24 take their own lives in one year (in America); when with the present rate of statistics, every marriage will end in divorce in eleven years; when 80 per cent of all crimes are committed by children under eighteen; when 43 per cent of unmarried mothers are school girls under sixteen, is it not time to ring the changes on self-denial instead of self-expression."

"जब अमेरिका में १५ से २४ वर्ष की आयु के १२०० युवक एक साल में आत्मघात कर रहे हैं जब वर्तमान गणना के आधार पर विचार करने से ११ साल में प्रत्येक विवाह का तलाक़ हो जायगा, जब सब तरह के पापों का ८० प्रतिशतक हिस्सा १८ वर्ष से कम आयु के युवक कर रहे हैं, जब अविवाहिता कुमारियों में से, जो माता बन जाती हैं उनमें से, ४२ प्रतिशतक संख्या १६ वर्ष से कम आयु की, स्कूल जानेवाली लड़कियों की है, तब क्या यह उचित प्रतीत नहीं होता कि अमेरिका अपने विकास की जगह अपने को मिटाने की फ़िक्र करे ?"

'इँगलैंड के सदाचार' के संबंध में 'नाइन्टीन्थ सेंचुरी' में

से कार्तिक मास की 'सुधा' में निम्न उद्धरण लिया गया है, जो 'सभ्यता' का राग अलापनेवाले देशों की सभ्यता पर काफी टीका है—

सन्	कुल कितने बच्चे पैदा हुए?	वैध सहवास से कितने?	अवैध सहवास से कितने?
१९१४	८,७९,०९६	८,४१,७६७	३७,३२९
१९१५	८,१४,६२४	७,७८,३६१	५४,२६३
१९१६	७,८५,५२०	७,४७,८३१	३७,६८९
१९१७	६,६८,३४६	६,३१,३३६	३७,०१०
१९१८	६,६२,६६१	६,२१,२०९	४१,४५२
१९१९	६,९२,४३८	६,५०,५६२	४१,८७६

यह है इँगलैंड का बढ़ता हुआ व्यभिचार!

नवंबर मास की 'मनोरमा' में 'गुजराती' से निम्न उद्धरण लिया गया है जो योरपियन देशों के नैतिक पतन का नंगा चित्र आँखों के सम्मुख खींच कर रख देता है—

"सुधार के पथ पर अग्रसर कहलानेवाले योरप और अमेरिका के सभ्य प्रदेशों में, 'जेंटिलमैनी' ढंग से व्यभिचार-वृद्धि के साथ वेश्याओं की संख्या भी बेतरह बढ़ती जा रही है; यहाँ तक कि अब तो इसने एक खासे व्यापार का रूप ही धारण कर लिया है। अर्थात्, इस बीसवीं शताब्दी की,

अन्य कई विशेषताओं में गोरी औरतों और लड़कियों का वेश्या बनकर व्यापार की वस्तु हो जाना एक ख़ास बात है। समस्त बड़े-बड़े राष्ट्रों के सहयोग से निर्मित 'राष्ट्र-संघ' के सम्मुख जब इस गंदगी का नाम शेष करने के लिये एक स्वर से अपील की गई, तब उसने एक कमीशन बिठाकर इस विषय की जाँच कराई। फलतः, कितनी ही गवाहियों तथा अन्य साधनों द्वारा जो विवरण प्राप्त हुए, वह सहसा चौंका देनेवाले हैं। उसी महासागर में केवल ऊपर तैरते दिखाई देनेवाले कुछ अंश ये हैं जो राष्ट्र-संघ के सम्मुख उपस्थित की हुई 'गोरी लड़कियों के व्यापार' की रिपोर्ट से लिए गए हैं—

फ्रांस का वेश्या चकला—योरप में वेश्याओं का व्यापार बड़े ही धूम-धड़ल्ले के साथ जारी है और बड़े-बड़े लखपती एवं कोट्याधीश धनिक इस काम में जी-जान से लगे हुए हैं। इस व्यापार में उनकी लगभग तीन करोड़ की पूँजी लगी हुई है। अकेले पेरिस (फ्रांस की राजधानी) में ही १७००० मकान वेश्याओं के रहने के लिये बाक़ायदा परवाना देकर सुरक्षित रक्खे गए हैं। ऐसे प्रत्येक घर में कम-से-कम ३० जवान लड़कियाँ रक्खी जाती हैं। इस हिसाब से पेरिस में केवल लाइसेंस-होल्डर वेश्याओं की संख्या ५१०००० (पाँच लाख दस हज़ार) है, तब गुप्त व्यभिचार करनेवाली

स्त्रियों का तो हिसाब ही क्या? इसी प्रकार ब्रसेल्स एक छोटा-सा नगर है, किंतु वहाँ भी वेश्याओं के लिये ७००० मकान सुरक्षित रक्खे गए हैं।

संपूर्ण फ्रांस देश में इस प्रकार के ७॥ लाख मकानों का लेखा तो सरकारी दफ़्तरों में मौजूद है। इसके अतिरिक्त गुप्त व्यभिचारियों की संख्या कितनी होगी, यह अनुमान से ही जानी जा सकती है। इतने पर भी तारीफ़ यह कि उक्त वेश्याओं को सरकार की ओर से डॉक्टरी प्रमाण-पत्र भी लाइसेंस के साथ दिए जाते हैं।

अमेरिका में—दक्षिण अमेरिका में भी यह व्यापार कम नहीं है। वहाँ के अकेले बुएनों-पेरिस नाम के शहर में वेश्याओं के लिये २० हज़ार घर सुरक्षित हैं। अर्थात् वहाँ भी ५-६ लाख लड़कियाँ इस धंदे में लगी हुई हैं। इसी प्रकार डिजेनेरा, मोंटे विडियो, मेक्सिको सिटी और पनामा-जैसे शहरों में भी इस व्यवसाय का बाज़ार गर्म है।

मूल संचालक पेरिस—किंतु इन सब गोरी वेश्याओं तथा युवतियों के व्यापार का प्रधान केंद्र पेरिस ही है! और वहाँ यह काम व्यवस्थित एवं विज्ञानसिद्ध पद्धति पर चलाया जाता है! इसके लिये स्वतंत्र आफ़िस खोलकर बड़ी-बड़ी तनख़्वाहें पानेवाले अधिकारी भी नियुक्त कर

दिए गए हैं। ये श्राफ़िस यहाँ नाटक-सिनेमा की एजेंसियों के नाम से प्रसिद्ध हैं और प्रत्येक व्यापारिक फ़र्म की तरह इन एजेंसियों में मोटर, टेलीफ़ोन आदि व्यवहारोपयोगी साधन भी रक्खे जाते हैं। प्रत्येक देश की राजधानियों में इस उद्योग की शाखाएँ खोल दी गई हैं और इस विभाग के अधिकारी लोग आवश्यकतानुसार नई गोरी लड़कियाँ उन प्रत्येक स्थानों में भेजते रहते हैं।

सन् १९२६ ई० में जर्मनी की राजधानी बर्लिन नगर में इस व्यापार के लिये ७५,००० लड़कियाँ एकत्र की गई थीं, और वे सब, जहाँ-तहाँ से लुभा-फुसलाकर लाई गई थीं। इन लड़कियों का मूल्य शरीर की बनावट और चेहरे के सौंदर्य पर लगाया जाता है; और २० पौंड (३०० रुपए) से लगाकर २०० पौंड (३ हज़ार रुपए) तक में बेची जाती हैं।"

रूस का हाल योरप के सब देशों से विचित्र है। ६ अगस्त, १९२७ के 'लिटररी डाइजेस्ट' में मालकम महोदय रूस के विषय में लिखते हैं—

"यदि स्त्री-पुरुष शादी करना चाहें, तो बस, 'इच्छा' ही क़ानून के लिये काफ़ी है। वे चाहें तो उसे रजिस्टर में दर्ज करा दें, चाहे न कराएँ, यह भी 'इच्छा' पर निर्भर है।

सोमवार को शादी होती है, मंगलवार को तलाक़ हो जाता है! १६२६ में १,००,००० स्त्रियों को उनके पति छोड़ गए; ६०,००० स्त्रियों के बच्चों को 'अपना' स्वीकार करनेवाला कोई नहीं मिला; १८,००० स्त्रियों ने अदालत में दरख्वास्त दी कि उन्हें अपने पतियों से बच्चों के भरण-पोषण के लिये खर्चा दिलवाया जाय। इस प्रकार २,०८,००० स्त्रियों का कुछ ठिकाना नहीं मालूम पड़ता। ये अंक सरकारी कारार्चों के हैं, और जो संख्या सरकारी कारार्चों में आने से रह गई है, उसका हिसाब ही नहीं! दो लाख, आठ हजार स्त्रियों की संतान का भरण-पोषण कौन करेगा? रूस में लावारिस बच्चे, जो इसी प्रकार की सोमवार की शादी और मंगलवार के तलाक से पैदा हुए हैं, ४० लाख की संख्या में मौजूद हैं!"

सुभ्यताभिमानी देशों के मुख पर यह कालिख पुती देखकर स्वाभाविकतया प्रश्न होता है, यह 'सभ्यता' है या 'दुराचार'?

४. "श्वेतांगों का भार"

गरीब-पर्वर गोरी दुनिया को यह तीव्र चिंता हर समय व्यथित किए रहती है कि संसार की रंगीन (लाल, पीली और काली) जातियों का असभ्यता की दलदल से किस

प्रकार उद्धार किया जाय? इस चिंता के भार से गोरी जातियों के लिये आराम करना हराम हो गया है। वे हर समय अपने को इस भार से दबा हुआ अनुभव करते हैं; अपनी इस सीम चिंता को वे लोग—"Whiteman's Burden"—इस नाम से पुकारते हैं। रंगीन जातियों को सभ्यता का स्वर्गीय प्रकाश देने का कार्य योरप की भिन्न-भिन्न जातियों ने आपस में बाँट रक्खा है। यहाँ तक कि योरप का नन्हा-सा बच्चा बेलजियम भी, जिसकी आबादी ३० लाख से अधिक नहीं है, अपने उत्तर-दायित्व को भली प्रकार निभाने का यत्न कर रहा है। काँगो के काले निवासियों को सभ्यता का पाठ पढ़ाने के लिये बेलजियम के रबर-प्लांटरों ने काँगो-स्त्रियों के स्तन कटवाए, बच्चों और नौ-जवानों के हाथ-पैर कटवाए, बूढ़ों को कोड़े लगवाए, उनकी स्त्रियों का सतीत्व नाश किया, पिताओं के सम्मुख लड़कियों को अप-मानित किया। यह सब इसलिये किया गया कि वहाँ के असभ्य निवासी रबर की उत्पत्ति करते हुए मशीन की तरह काम न करके भूख, प्यास, थकावट आदि की शिकायत करते थे। यह तो अल्पशक्ति बेलजियम की बात हुई। यहाँ हम, नमूने के तौर पर, डा० छेदीलाल एम्० ए०, बैरिस्टर के 'प्रभा' में प्रकाशित कुछ लेखों के आधार पर

३-४ मुख्य-मुख्य गोरी जातियों के शुद्ध निष्कामभाव से रंगीन जातियों की सेवा के लिये किए गए कार्यों का वर्णन करेंगे।

मिस्र—क्या हुआ यदि एक समय मिस्र (ईजिप्ट) संसार के सभ्यतम देशों में था। उस ज़माने को तो अब ५ हज़ार साल बीत गए। वहाँ के उन्नत-मस्तक-पिरैमिड और हज़ारों सालों तक सुरक्षित पड़ी रहनेवाली लाशें मिस्री लोगों के रंगीन होने के भारी पाप का तो प्रतिकार नहीं करतीं ! अतएव योरप-निवासी मिस्र को सभ्यता की शिक्षा देने को व्यग्र हो उठे। १९वीं सदी में, ज़रूरत पड़ने पर, जब वहाँ के राजा इस्माइल ने योरपियन साहूकारों से ८ करोड़ १० लाख रुपए उधार लिए, तब उन्होंने उससे बेईमानी करके १४ करोड़ ४० लाख की रसीद लिखा ली। इसके बाद, राजा के वैयक्तिक कर्ज़ को सारे देश पर लादकर मिस्र को अपने चंगुल में फँसा लिया गया। इस्माइल के बाद १८८० में जब खदीव राजा बना, तो प्रजा का असंतोष देखकर उसने शासन में सुधार करने का निश्चय किया। परंतु, इन सुधारों से गोरे लोग मिस्रियों को सभ्यता का पाठ न पढ़ा सकते थे, अतः राजा को बहकाया गया। राजा से प्रजा प्रतीप्र दमन-नीति का चक्र चलवाकर मिस्र का आर्थिक-

प्रबंध इँगलैंड और फ्रांस ने अपने हाथ में कर लिया। प्रजा का नेता अराबी-पाशा था, उस पर तथा उसके अनुयाइयों पर इन लोगों ने भारी अत्याचार कराए। साथ ही मिस्र के सच्चे समाचारों से संसार को अपरिचित रखने के लिये रूटर तथा हवास कंपनियों को १२०० पौंड (१८ हजार रुपया) वार्षिक की रिश्वत दी गई ! खदीव जब कभी प्रजा-पक्ष की तरफ़ झुकता था, तब उसे सब उपायों से भड़काने का यत्न किया जाता था। इस काम में एडवर्ड कालविन ने बड़ी दक्षता दिखलाई। कालविन अपनी धूर्तता तथा चालबाज़ी के बारे में स्वयं कहता है कि "पूर्वी लोगों को हमसे अधिक चालाक समझना लोगों का भ्रम है। यदि कोई अँगरेज़ चालों से जान-कारी रखता हो, तो वह अपनी चालाकी से खूब छका सकता है। जब कभी हमसे इनका मुक़ाबिला हुआ, तो ये लोग धूर्तता और छल में हमारे सामने निरे बच्चे प्रतीत हुए।" उक्त घटना के बाद, श्रम-विभाग के सिद्धांतानुसार, इँगलैंड ने मिस्र को और फ्रांस ने मोरोक्को को शिक्षित करने का काम सँभाल लिया। इँगलैंड अपना उत्तरदायित्व किस ख़ुशबैदी से निभाता रहा है, यह बात निम्न घटना से प्रकट होती है—
'सन् १६०५ में पाँच या छः अँगरेज़ी फ़ौजी अफ़सर दिनरा-षाई गाँव में शिकार खेलने गए। वहाँ जाकर वे दो दलों

में विभक्त होकर गाँव के पाले हुए कबूतरों का शिकार करने लगे। गाँववालों के मना करने पर साहब लोगों ने नाराज होकर बंदूक से गाँव की एक औरत तथा तीन पुरुष जख्मी किए। गाँववालों ने इस उच्छृंखलता से क्रुद्ध होकर इन अफ़सरों को मारा और उनकी बंदूकें छीन लीं। एक अफ़सर छूटकर भागा; मगर तेज़ धूप में भागने से लू लगने के कारण वह मर गया। इस पर फ़ौजवाले दूसरे सिपाही गाँववालों के साथ मनमाना अत्याचार करने लगे। एक खास अदालत बैठाई गई, जिसने चार आदमियों को फाँसी की, तथा और दो गाँववालों को जन्म-भर काला-पानी से लेकर ५० बेंत तक की सजा दी।' इस प्रकार इँगलैंड की अध्यक्षता में मिस्र को सभ्य बनाने का कार्य बहुत दिनों तक चलता रहा।

ईरान—महात्मा जरथुश्थ्र, शेखसादी, हाफ़िज, फ़िर-दौसी तथा उमर खय्याम की जन्मभूमि ईरान भी एशियाई अथवा रंगीन होने से बहसी है। उसे सभ्य करने का भार इँगलैंड ने उस दिन से अपने ऊपर लिया, जिस दिन ईरान-नरेश नसीरुद्दीन ने १५ हजार पौंड वार्षिक पर टालबक-नामक अँगरेज को देश के तंबाकू का कुल व्यापार सौंप दिया। अपनी भूल मालूम पड़ते ही नसीरुद्दीन ने ठेका वापस लेना

चाहा, परंतु इँगलैंड बीच में कूद पड़ा। कहा गया कि ७५ लाख रुपया हर्जाने के तौर पर देकर ही ठेका तोड़ा जा सकता है। कोश में रुपया न होने से 'इंपीरियल बैंक ऑफ़ पर्शिया' से, जो अँगरेजों का बैंक था, यह रक़म शाह को दिलाई गई। इस प्रकार केवल सूद के रूप में ईरान पर ४॥ लाख रुपया सालाना देने का भार विना कारण डाला गया। अगले शाह मुजफ़्फ़रदीन ने रूस से ३ करोड़ रुपया क़र्ज़ लेकर टालबक से पीछा छुड़ाया, परंतु एक नई आफ़त खड़ी कर ली। इसके फलस्वरूप, रूस ने ईरान से कर वसूल करने का कार्य अपने हाथ में लिया। १६०२ में मूर्ख मुजफ्फर-दीन ने तीन करोड़ रुपया रूस से फिर उधार लिया। प्रजा में असंतोष बढ़ने लगा, लोग पार्लियामेंट की माँग करने लगे, शाह ने प्रजा की बात मानकर पार्लियामेंट खोल दी, परंतु इस बीच में शाह की मृत्यु हो गई। अगला शाह पार्लियामेंट के विरुद्ध था, जनता में असंतोष बढ़ने लगा। इधर १६०७ में रूस तथा इँगलैंड ने ईरानवालों के विना जाने ही आपस में यह समझौता कर लिया कि उत्तरी ईरान में इँगलैंड रूस के कार्य में हस्ताक्षेप न करे, और दक्षिण में इँगलैंड जो चाहे सो करे। ईरानी-प्रजा में इस समझौते के कारण और भी असं-तोष फैला। पार्लियामेंट ने शाह को देश की बात मानने का

नोटिस दिया, इस पर इँगलैंड और रूस दोनों ही शाह की आड़ में पार्लियामेंट पर पिल पड़े। पार्लियामेंट पर गोलियाँ चलाई गईं, नेता क़ैद कर लिए गए। इँगलैंड तथा रूस के जंगी जहाज़ ईरान के समुद्र में दिखाई देने लगे। दाल में काला देखकर राष्ट्रीय दल ने तेहरान पर चढ़ाई करके शाह को उतारकर १६०६ में अहमदशाह को गद्दी पर बैठाया। देश का शासन पार्लियामेंट द्वारा चलने लगा। नया प्रबंध होने के कारण धन की आवश्यकता थी, परंतु इँगलैंड और रूस योरपियन महाजनों से रुपया दिलवाने में रोड़ा अटकाते थे। अंत में अमेरिका ने आर्थिक सहायता दी। ईरानी प्रजा-तंत्र का काम सँभलता देखकर रूस ने पदच्युत शाह का पक्ष लेकर पार्लियामेंट से शाह की वैयक्तिक संपत्ति पर अधिकार माँगा और 'अल्टीमेटम' दे दिया! ईरान के कुलीन घरानों की ३०० महिलाओं ने पार्लियामेंट के अधिवेशन में जाकर प्रधान से ईरान का गौरव बचाने का वीरतापूर्ण अनुरोध किया। इन वीर देवियों ने यहाँ तक कहा कि यदि पार्लियामेंट देश के मान की रक्षा में कुछ भी कसर छोड़ेगी तो हम सब अपने हाथों से पुत्र, पति तथा पिता को मारकर स्वयं भी मर जायँगी। परिणाम यह हुआ कि रूस ने तेहरान पर चढ़ाई कर दी और प्रतिष्ठित नेताओं के टुकड़े-

टुकड़े कर, उन्हें सड़कों पर लटकाया गया, स्त्रियों तथा बच्चों को क़त्ल किया गया। बाधित होकर ईरान को रूस के सम्मुख अस्त्र रख देने पड़े। पिछले दिनों रूस में बोलशेविक-सरकार स्थापित हो जाने के कारण रूस ने ईरान से अपना हाथ खींच लिया और इँगलैंड को मनमानी करने का अवसर प्राप्त हुआ। तब इँगलैंड और ईरान में एक समझौता हुआ, जिसके अनुसार ईरान फ़ौजी तथा आर्थिक मामलों में इँगलैंड को छोड़कर और किसी देश से सहायता नहीं ले सकता !!—भला कोई पूछे तो, 'क्यों' ?

चीन—यद्यपि वर्तमान वैज्ञानिक युग का प्रारंभ चीन से हुआ है, क्योंकि चीनी लोगों ने ही छापेख़ाने और बारूद का आविष्कार किया है, तथापि रंगीन होने के कारण उसे श्वेतांगों से सभ्यता की शिक्षा लेनी ही होगी। आज चीनियों को अफ़ीमची कहकर उनकी खिल्ली उड़ाई जाती है, परंतु १८वीं सदी के अंत में स्वयं मि० एस० शेवेंड्रीच के कथनानुसार, अँगरेज़-व्यापारी समुद्री डाकुओं के साधन व्यवहार में लाकर धोके और बेईमानी से चीनी-लोगों में इस ज़हर का प्रचार करते रहे हैं। उनकी इन कारस्तानियों का नतीजा यह हुआ कि १८२१ में जहाँ चीन में केवल २०० पेटी अफ़ीम की बिक्री हुई थी, वहाँ

१८३५ में १७,००० पेटी अफ़ीम बेची गई। चीन-सरकार ने अँगरेज़ों से अफ़ीम का व्यापार रोकने की प्रार्थना की, परंतु उसका कोई परिणाम न निकलने पर चीन-सरकार ने चीन में अफ़ीम का प्रवेश क़ानून बनाकर बंद कर दिया। इस पर भी कुछ सभ्यताभिमानी अँगरेज़ छिपे तौर से चीनियों में इस विष का प्रचार करने लगे, विवश होकर चीन-सरकार ने उन्हें दंड दिया। तब क़ानून और व्यवस्था (Law and order) की रात-दिन, दोहाई देनेवालों ने ही १८४० में अपनी बर्बर और राक्षसी सभ्यता की दोहाई देकर चीनी-शहरों पर गोलाबारी शुरू कर दी। बेचारा चीन कमज़ोर था, यही उसकी असभ्यता थी; और ये लोग ताक़तवर थे, यही इनकी सभ्यता थी। विवश होकर चीन को हार माननी पड़ी। लेने के देने पड़ गए। इन्होंने उसे खुले हाथों लूटा। हाँग-काँग चीन से छीन लिया गया, युद्ध का ख़र्च चीन पर ही डाला गया, और घाव पर नमक यह कि अफ़ीम का व्यापार खुले आम जारी कर दिया गया! संसार में सचमुच कमज़ोर होना ही सबसे बड़ी असभ्यता है! इसका परिणाम यह हुआ कि चीनी लोग इन आततायियों से घृणा करने लगे। उन्होंने शाटुंग के पादरी को मार डाला। कारण यह था कि उसने उन्हीं के मंदिर में जाकर उनके धर्म की घोर निंदा

की थी। १८९९ में अँगरेज़ों के विरुद्ध चीन में कई स्थानों पर विद्रोह हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि योरप के समस्त डाकुओं ने एक होकर ग़रीब चीन पर चढ़ाई कर दी! इन सभ्य कहलाए जानेवाले लोगों ने, जो बर्बरता चीन में की, उसका उदाहरण इतिहास में मिलना कठिन है। "चीन के मंदिरों में घोड़े बाँधे गए। चीन की राजधानी पेकिन में एक सप्ताह तक खूब मार-काट रही। संपूर्ण नगर से हस्त-लिखित क़ीमती किताबें गाड़ियों में भर-भरकर लाई जाती थीं, और राजमहल के आँगन में उनका ढेर लगाकर उसे आग लगा दी जाती थी! हज़ारों अमूल्य पुस्तकें जलाई गईं। सारी सड़क पुस्तकों के फटे और जले हुए पन्नों से भर गई।" यह कथन लंडन-टाइम्स के संवाददाता जॉर्ज लिंच का है, जो उस समय पेकिन में ही था। इसी प्रकार हिंडमैन का कथन है कि "चीन में इस युद्ध के अवसर पर लूट-मार करना, आग लगाना, स्त्रियों का अपमान करना, उनका सतीत्व हरण करना, ये सब घृणित बातें की गईं।" इस युद्ध के बाद चीन के बहुत-से भाग को इँगलैंड, रूस और जर्मनी ने परस्पर बाँट लिया। अब फ़्रांस और अमेरिका को भी काफ़ी भाग दे दिया गया है। ये सब शक्तियाँ मिलकर चीन को सभ्यता का पाठ पढ़ा रही हैं!

भारत—भारत के विषय में श्वेतांग महाप्रभुओं का भारी बोझ दर्शाने के लिये भी क्या कुछ लिखने की जरूरत है ? पीछे क्या हो चुका है, इस कहानी से क्या ? इस बीसवीं शताब्दी में भी यहाँ क्या हो रहा है ? दो बातों से पता चल जायगा कि हमारे प्रभुओं को हमारी कितनी चिंता है ! एप्रिल, १९२६ के 'मॉडर्न रिव्यू' में भारत के सैनिक व्यय की अन्य देशों के व्यय के साथ तुलना की गई है। संयुक्त-राज्य अमेरिका अपने राष्ट्र की आमदनी का २१.७ प्रतिशतक ग्रेट ब्रिटन १३.१ प्रतिशतक ; फ्रांस १८.१ प्रतिशतक ; इटली ६.३ प्रतिशतक ; हॉलैंड २०.२ प्रतिशतक ; बेलजियम ६.४ प्रतिशतक तथा स्विटजरलैंड १६.६ प्रतिशतक सैनिक व्यय करते हैं, परंतु १९२५-२६ के बजट के अनुसार भारत को अपनी १३१ करोड़ ३६ लाख आमदनी का ६० करोड़ १४ लाख, अर्थात् ४६ प्रतिशतक या आधे के लगभग, सैनिक खर्च करना पड़ा। सब देशों से ज्यादा सैनिक-व्यय भारत का रहा। इसके प्रतिकूल शिक्षा पर जहाँ भारत में ४ आना, या कइयों के मत में ६ आना प्रति व्यक्ति, प्रति वर्ष, खर्च होता है, वहाँ डेनमार्क में १७ रुपए, अमेरिका में १६ रु० ४ आ०, इँगलैंड में ६ रु० २ आ०, फ्रांस में ६ रु०, जापान में ८ रु० प्रति व्यक्ति खर्च होता है। भारत की समृद्धि भी

कुछ कम नहीं हो रही। अकबर के समय गेहूँ रुपए का १३५ सेर, जौ २०२ सेर, चावल ८० सेर, चीनी २६। सेर, घी १५। सेर तथा तेल ६४ सेर मिलता था। सभ्यता का पाठ सीखने के बाद भारत का जो हाल है, वह पाठकों से छिपा नहीं। भारतवर्ष की प्रति व्यक्ति आमदनी का हिसाब देखने से भी आँसू ही बहाने पड़ते हैं! यह दादा भाई नौरोजी ने २० रु० प्रति व्यक्ति आँकी थी! बेरिंग बारबर ने २७ रु०; लॉर्ड कर्जन ने ३० रु०; प्रो० के० टी० शाह ने ४६ रु० और डिग्बी महोदय ने १७.४ रुपया! परंतु इँगलैंड में प्रति व्यक्ति वार्षिक आमदनी ६३०) रु०, स्कॉटलैंड में ६२५), आस्ट्रेलिया में ६००), अमेरिका में ५८५), बेलजियम में ४२०), फ्रांस में ४०५), केनाडा में ३६०), जर्मनी में ३३०), हॉलैंड में ३३०), नारवे में ३००), स्विटज़रलैंड में २८५), स्पेन में २४०), आस्ट्रिया में २२५), इटैली में १८०) तथा सबसे कम रूस में १६५) है! भारत की वार्षिक आमदनी प्रति व्यक्ति १५ या १६ रु० है, शायद ५-१० रु० ज्यादा हो, परंतु यहाँ के क़ैदियों पर प्रति व्यक्ति ५०) सालाना खर्च होता है। भले मानुस से तो इस प्रकार क़ैद जानेवाला ही मज़े में रहता है!

उपसंहार

पाठक ! आपने मिस मेयो के शब्दों में पढ़ लिया, भारत की क्या अवस्था है ! आपको यह भी मालूम हो गया कि अन्य देशों की अवस्था अनेक अंशों में भारत से भी गई-बीती है । परंतु इन पंक्तियों को समाप्त करने तथा आप-से विदाई लेने से पूर्व मैं एक बार फिर वही शब्द दोहराना चाहती हूँ, जिन शब्दों से मैंने इस पुस्तक की भूमिका को प्रारंभ किया है । माना कि योरप तथा अमेरिका पाप की दलदल में धँसते चले जा रहे हैं, माना कि उन्हीं ने स्वार्थों से प्रेरित होकर कमजोर जातियों की रक्षा के नाम पर उनका शिकार खेला है, माना कि उनके अत्याचारों को देख-कर पिशाच भी चीख उठते हैं, परंतु क्या इतना कह देने-मात्र से हम मिस मेयो का मुख बंद कर सकते हैं ? क्या यह ठीक नहीं है कि भारत में देवतों के नाम पर निरसहाय प्राणियों का वध किया जाता है, 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते' का उच्चारण करते-करते स्त्रियों को पाँव की जूती समझा जाता है, गो-रक्षा की दुहाई देने के साथ ही गो-माता पर भीषण अत्याचार होता है ? यदि यह ठीक है, और कौन कह सकता है कि यह ठीक नहीं है, तो जब तक इन बुराइयों

बुद्ध चरित्र (सचित्र) ॥), १)
बेणी संहार ॥=), १=)
वरमाला (सचित्र) ॥), १)
पतिव्रता १।=), १॥=)
अचलायतन ॥), १)
पूर्व भारत ॥=), १=)
ईश्वरीय न्याय ॥)
मूर्ख-मंडली ॥=), १=)
मिस्टर व्यास की कथा२॥), २)
राजरहादुर ।), १)
लवङ्घोंघों ॥=), १=)
विवाह विज्ञापन
(साचित्र) १), १॥)
आत्मार्पण (सचित्र) ॥) १)
उषा (सचित्र) ॥=), १=)
पराग (साचित्र) ॥), १)
पुष्पाञ्जलि लगभग १॥)
पूर्ण-संग्रह १॥), २)
भारत-गीत ॥=), १।=)
मानस मुक्तावली ॥=)
रतिरानी लगभग १॥)
निबंध निचय १), १॥)
विश्व साहित्य १॥), २)
साहित्य सुमन ॥=), १=)
मंदिरनद महाकाव्य ॥), १)
हिंदी ॥=), १=)
साहित्य-सदर्भ १॥) २)
सभाषण १) ॥)
देव और विहारी १॥), २)
भवभूति ॥=), १=)
हिंदी-नवरत्न ४॥), ५)
केशवचन्द्रसेन १), १॥)
कारनेगी और उनके विचार ॥=)
प्रभु चरित्र ॥), १)
प्राचीन पंडित और
कवि ॥=), १=)
बंकिमचंद्र चटर्जी १), १॥)
सुकवि संकीर्तन १), १॥)
इँगलैंड का इतिहास
(तीन भाग, सचित्र)
३॥), ४॥)
जापान का इतिहास ॥=)
स्पेन का इतिहास ॥=)
भारतीय अर्थशास्त्र
(दो भाग) २॥), ३॥)
विदेशी विनिमय १) १॥)

कृषि

उद्यान (सचित्र) १=), १॥=)
किसानों की कामधेनु
(सचित्र) ।=)
कृषिमित्र ।-)
कृषि विद्या ॥), १)